इग्नू
जन–जन की
विश्वविद्यालय

**BPSC-102**

# संवैधानिक सरकार और भारत में लोकतंत्र

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

## विशेषज्ञ समिति


प्रोफेसर डी. गोपाल (अध्यक्ष)
राजनीति विज्ञान संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली, 110068

प्रोफेसर ए.के सिंह
फेडरल अध्ययन केन्द्र
जामिया हमदर्द विश्वविद्यालय
नई–दिल्ली

प्रोफेसर अनुराग जोशी
राजनीति विज्ञान संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली, 110068

प्रोफेसर एस. वी. रेड्डी
राजनीति विज्ञान संकाय,
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू,
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली

प्रोफेसर अमित प्रकाश
लॉ एवं गवर्नेंस अध्ययन केन्द्र, जवाहरलाल
नेहरु विश्वविद्यालय, नई–दिल्ली

प्रोफेसर सार्तिक बाग
राजनीति विज्ञान विभाग, बाबा साहेब
भीमराव अंबेडकर, राय बरेली, रोड़, लखनऊ

प्रोफेसर जगपाल सिंह
राजनीति विज्ञान संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू
मैदान गढ़ी, नई–दिल्ली, 110068


## पाठ्यक्रम तैयार करने वाली टीम

| खण्ड और इकाई | इकाई लेखक |
|---|---|
| **खण्ड 1 संविधान सभा और संविधान** | |
| इकाई 1 संविधान का निर्माण | प्रोफेसर जगपाल सिंह, राजनीति विज्ञान संकाय, सामाजिक विद्यापीठ, इग्नू |
| इकाई 2 दार्शनिक पृष्ठभूमि | प्रतिप चटर्जी, असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, कल्याणी विश्वविद्यालय, नदिया, पश्चिम बंगाल |
| इकाई 3 प्रस्तावना | प्रोफेसर जगपाल सिंह, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू |
| इकाई 4 मौलिक अधिकार | डा. दिव्या रानी, अकादमिक ऐसोसियेट, राजनीति संकाय, इग्नू |
| इकाई 5 राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत | डा. दिव्या रानी, अकादमिक ऐसोसियेट, राजनीति संकाय, इग्नू |
| इकाई 6 मौलिक कर्तव्य | जयंत देबनाथ, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान संकाय, मृनालिनी दत्ता, महाविद्यापीठ, कोलकता |
| **खण्ड 2 सरकार के अंग** | |
| इकाई 7 विधायिका | प्रोफेसर प्रलय कानूनगो, राजनीति अध्ययन केन्द्र, जे.एन.यू. नई दिल्ली |
| इकाई 8 कार्यपालिका | प्रोफेसर विजयशेखर रेड्डी, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली |
| इकाई 9 न्यायपालिका | प्रोफेसर विजयशेखर रेड्डी, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली |
| **खण्ड 3 संघवाद और विकेन्द्रीकरण** | |
| इकाई 10 शक्तियों का विभाजन | प्रतिप चटर्जी, असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, कल्याणी विश्वविद्यालय, नदिया, पश्चिम बंगाल |
| इकाई 11 आपातकालीन प्रावधान | जयंत देबनाथ, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान संकाय, मृनालिनी दत्ता, महाविद्यापीठ, कोलकता |
| इकाई 12 पाँचवी और छठी अनुसूची | डा. नोंगमेंथेम किशोर चंद सिंह, अकादमिक एसोसिएट, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली |
| इकाई 13 स्थानीय स्व–शासन | डा. विनायक नारायण श्रीवास्तव, पूर्व फेलो, नेहरु स्मारक एवं पुस्तकालय, नई दिल्ली, और डा. गुरूपदा सरन, स्कूल ऑफ कन्टीन्यूइंग एडुकेशन, इग्नू, |

**पाठ्यक्रम संयोजक** : प्रोफेसर जगपाल सिंह

**सामान्य संपादक** : प्रोफेसर जगपाल सिंह

**अनुवादक** : डॉ. गिर्राज प्रसाद बैरवा, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, दिल्ली विश्वविद्यालय

**प्रूफरीडिंग एवं वैटिंग** : डॉ. दिव्या रानी अकादमिक असोसिएट, राजनीति विज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली

## सामग्री निर्माण

श्री मंजीत सिंह
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली


अप्रैल, 2019



*© इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2019*
*सर्वाधिकार सुरक्षित। इस कृति का कोई भी अंश, मिमियोग्राफ या किसी भी अन्य रूप में, इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी अन्य व्यक्ति द्वारा पुनरुत्पादित नहीं किया जा सकता है।*



इंदिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से निदेशक, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।
लेजर टाइप सेटिंग : टेसा मीडिया एण्ड कम्प्यूटर, C-206, A.F.Enclave-II, नई दिल्ली

# पाठ्यक्रम सामग्री (विषय सूची)


| | | | पृष्ठ संख्या |
|---|---|---|---|
| **खण्ड** | **1** | **संविधान सभा और संविधान** | **5** |
| इकाई | 1 | संविधान का निर्माण | 7 |
| इकाई | 2 | दार्शनिक आधार | 19 |
| इकाई | 3 | प्रस्तावना | 26 |
| इकाई | 4 | मौलिक अधिकार | 33 |
| इकाई | 5 | राज्य के नीति नीति निर्देशक सिद्धांत | 43 |
| इकाई | 6 | मौलिक कर्तव्य | 51 |
| **खण्ड** | **2** | **सरकार के अंग** | **61** |
| इकाई | 7 | विधायिका | 63 |
| इकाई | 8 | कार्यपालिका | 74 |
| इकाई | 9 | न्यायपालिका | 85 |
| **खण्ड** | **3** | **संघवाद और विकेन्द्रीकरण** | **97** |
| इकाई | 10 | शक्तियों का विभाजन | 99 |
| इकाई | 11 | आपातकालीन प्रावधान | 108 |
| इकाई | 12 | पाँचवी एवं छठी अनुसूची | 115 |
| इकाई | 13 | स्थानीय स्व–शासन | 127 |
| **संदर्भ सूची** | | | **140** |

# पाठ्यक्रम परिचय

यह पाठ्यक्रम भारत में संविधानिक सरकार और लोकतंत्र के विभिन्न पहलुओं के बारे में आपको जानकारी प्रदान करता है। यह संविधान में उल्लेखित लोकतांत्रिक मूल्यों के बारे में आपको परिचित कराता है तथा नागरिकों के बीच संबंधों, राज्य एवं नागरिकों के बीच संबंधों, राज्य की विभिन्न इकाइयों के बीच संबंधों जैसे केन्द्र सरकार, राज्य सरकार और स्थानीय सरकार एवं राज्य के विभिन्न अंगों जैसे कार्यपालिका, विधायिका, तथा न्यायपालिका के बीच संबंधों के बारे में जानकारी प्रदान करता है। जैसा कि आप इस पाठ्यक्रम की विभिन्न इकाइयों में पढेंगे, भारत का संविधान लोगों को शासन प्रदान करता है। जिसमें उनके अधिकार, उनका सम्मान तथा संप्रभुता सुरक्षित रहती हैं। संविधान के प्रावधान सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषायी बहुलवाद की भी रक्षा करते हैं। इसमें कुछ आपातकालीन प्रावधान भी दिए गए हैं जो कि लोगों के अधिकारों पर प्रतिबंध लगाता है। ये प्रावधान विभिन्न प्रकार की आपातकालीन स्थितियों के प्रावधान है।

इस पाठ्यक्रम में 13 इकाइयों की चर्चा की गयी है। सार के आधार पर ये इकाइयाँ तीन खण्डों (ब्लाक्स) में विभाजित है। खण्ड एक संविधान सभा और संविधान के बारे में है। खण्ड दो सरकार के अंगों से संबंधित है। और खण्ड तीन संघवाद और विकेन्द्रीयकरण की चर्चा करता है। इन इकाइयों एवं खण्ड का परिचय प्रत्येक खण्ड के शुरू में दिया गया है।

प्रत्येक इकाई में अभ्यास प्रश्न भी दिए गए हैं। प्रत्येक इकाई को पढ़ने के बाद आप इन प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास कर सकते हैं। इकाई के अंत में आप इन अभ्यास प्रश्नों के उत्तर भी देख सकते हैं। आप अपने उत्तर की जाँच इकाई में दिये गये उत्तर के साथ कर सकते हैं। लेकिन आप अपने शब्दों में उत्तर देने के लिए सावधानी बरतें।

पाठ्यक्रम के अंत में कुछ महत्वपूर्ण संदर्भ सूची भी दी गयी है। आपको सलाह दी जाती है कि आप इसका इस्तेमाल करें।

# खण्ड 3
# संघवाद और विकेन्द्रीकरण

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

# खण्ड 3 संघवाद और विकेन्द्रीकरण

भारत के संविधान में शक्तियों के विभाजन का प्रावधान है जो सरकार की विभिन्न इकाइयों में विभाजित है। ये इकाइयां इस प्रकार है, संघ या केन्द्र सरकार, राज्य सरकार तथा स्थानीय सरकार। इनके बीच शक्तियों का विभाजन किया गया है जिसे हम संघवाद तथा विकेन्द्रीकरण के रूप में भी देखते हैं। इस खण्ड में आप संघवाद और विकेन्द्रीकरण के बारे में पढ़ेंगे। इस खण्ड में चार इकाई है। इकाई संख्या 10 में केन्द्र एवं राज्यों के बीच शक्तियों के बंटवारे का प्रावधान है। इसे हम शक्तियों का विभाजन भी कहते है। यह शक्ति, पृथक्करण से अलग है। जैसे कि आपने खण्ड 2 में पढ़ा है सरकार के विभिन्न अंगों के बीच सत्ता का बंटवारा – कार्यपालिका, विधायिका एवं न्यायपालिका। इकाई संख्या 11 में आपातकालीन प्रावधानों का जिक्र है। इसमें संघ सरकार द्वारा राज्यों की सरकारों को अपने अधीन करने का प्रावधान है। इकाई 12 जनजाति क्षेत्रों की स्वायत्ता के बारे में चर्चा करता है जिसमें भारत के उत्तर–पूर्वी राज्य शामिल है। ये भारत के संविधान में पांचवी और छठी अनुसूची में दिये गये है। इकाई संख्या 13 स्थानीय सरकारों से संबंधित है। यह स्थानीय स्तर पर ग्राम, कस्बे एवं शहरों में स्थानीय सरकारों को स्वायत्ता देने की बात करता है। जो संस्था इनके उपर शासन करती है उन्हें स्थानीय स्व–शासन कहते हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

# इकाई 10 शक्तियों का विभाजन*

**संरचना**


10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 शक्तियों का विभाजनः सैद्धांतिक एवं वैचारिक पृष्ठभूमि

10.3 भारत के संविधान में शक्तियों का विभाजन

10.3.1 संघ सूची

10.3.2 राज्य सूची

10.3.3 समवर्ती सूची

10.4 कानून बनाने की अवशिष्ट शक्ति

10.4.1 सरकारिया आयोग

10.5 प्रशासनिक एवं वित्तिय शक्तियों का विभाजन

10.6 सारांश

10.7 उपयोगी संदर्भ

10.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर


## 10.0 उद्देश्य

इस इकाई के पढ़ने के बाद आप यह जान सकेंगे :

- भारतीय संविधान में शक्तियों के विभाजन का तर्क (मूलाधार);
- संघीय राजनीति के लिए शक्तियों के विभाजन के महत्व का मूल्यांकन करना;
- विभिन्न सूचियों को जानना जिनसे केन्द्र और राज्यों के बीच शक्तियों का विभाजन किया गया है;
- शक्तियों के विभाजन एवं संघवाद की प्रकृति के बीच संबंधों का विश्लेषण करना; और
- भारतीय संविधान में शक्तियों के विभाजन से संबंधित अनुच्छेदों को इंगित करना।

## 10.1 प्रस्तावना

शक्तियों के विभाजन की अवधारणा का सैद्धांतिक तौर पर जॉन लॉक ने विवरण किया। इसे मॉन्टेस्क्यू ने परिवर्तित किया तथा यह संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान में प्रतिबिंबित हुआ। साधारण अर्थ में, संघवाद शक्तियों का विभाजन है राष्ट्रीय एवं राज्य सरकारों के बीच में। संघवाद में, स्पष्ट विभाजन होता है, जिससे केन्द्र अपनी परिधि के अंदर आने वाले विषयों पर कानून बनाता है तथा राज्य अपनी परिधि के अंतर्गत आने वाले विषयों पर कानून बनाते है। कोई भी एक दूसरे के कार्यो में दखल नहीं दे सकता तथा अपनी सीमा का उल्लंघन नहीं कर सकता है। वास्तव में संघवाद दो या दो से अधिक समुदायों के बीच में समझौता है जो स्वतंत्र एवं स्वायत्त है। उन्हें इस बात का अहसास था कि कुछ मामलों में उनका हित समान है इसलिए वे एक साथ आने तथा एक सरकार


*प्रतिप चटर्जी, असिस्टेंट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान, कल्याणी विश्वविद्यालय, नदिया, पश्चिम बंगाल।

के अधीन आने को सहमत हुए ताकि उनके हित सुरक्षित रह सके। सभी मामलों में राज्य सरकारें स्वतंत्र तथा स्वायत्त थी। यह समझौता भारत के संविधान में समाहित है। 7वीं अनुसूची (भाग 11) के अंतर्गत तीन सूचियों का प्रावधान हैं इसमें संघ सूची, राज्य सूची एवं समवर्ती सूची के विषय शामिल हैं। संघ सूची के विषयों पर केन्द्र कानून बनाता है, राज्य सूची के विषयों में राज्य कानून बना सकता है तथा समवर्ती सूची के विषयों पर केन्द्र और राज्य दोनों कानून बनाते हैं।

## 10.2 शक्तियों का विभाजनः सैद्धांतिक एवं वैचारिक पृष्ठभूमि

शक्तियों के विभाजन की अवधारणा का संबंध आधुनिक राष्ट्र–राज्य की उत्पत्ति के इतिहास एवं इसके प्रशासनिक पहलू से है। यह मुख्यतया शक्तियों के विभाजन के विचार से उत्कृष्ट है। जीन बोदाँ प्रथम लेखक थे जिन्होंने शक्तियों के विभाजन की मांग की। उन्होंने अपनी किताब ''द स्प्रीट ऑफ लॉज'' (1748) जिसे मॉटेरक्यू ने शक्तियों के विभाजन के सिद्धांत के रूप में समझाया हैं उन्होंने लिखा कि (क) यदि विधायी एवं कार्यपालिका शक्तियाँ किसी एक अंग या संस्था में समहित हो जाये तो लोगों की स्वतंत्रता खतरे में पड़ सकती है क्योंकि इससे निरंकुश शासन को बढ़ावा मिल सकता है (ख) यदि न्यायिक और विधायी शक्तियों भी किसी एक अंग या संस्था में मिल जाये तो इसके कानूनो की व्याख्या निरर्थक हो जायेगी क्योंकि कानून बनाने वाला ही कानूनों की व्याख्या करता है और वह कभी भी अपनी गलती स्वीकार नहीं कर सकता है। (ग) यदि न्यायिक शक्तियों को कार्यपालिका की शक्तियों में मिला दिया जाये और इसे किसी एक व्यक्ति या एक संस्था को दे दिया जाये तो प्रशासन निरर्थक हो जायेगा तथा दोषी हो जायेगा क्योंकि उस समय पुलिस ही जज बन जायेगी। (घ) अंत में यदि तीनों शक्तियों कार्यपालिका, विधायिका एवं न्यायपालिका किसी एक संस्था में मिला दी जाये और उसे किसी एक व्यक्ति या संस्था को दे दी जाये तो इससे शक्तियों का संतुलन बिगड़ जाता है और सभी प्रकार की स्वतंत्रताऐं भी समाप्त हो जाती है। इससे उस संस्था या व्यक्ति की तानाशाही स्थापित हो जाती है। इस प्रकार इन तीनों शक्तियों को किसी एक व्यक्ति या संस्था को नहीं दिया जाना चाहिये। इन तीनों शक्तियों का प्रयोग तीन अलग–अलग संस्थाओं द्वारा किया जाना चाहिये। क्योंकि लोगों की स्वतंत्रता की रक्षा करना भी सबसे महत्वपूर्ण है। बाद में ब्रिटिश विधिनेता ब्लैकस्टोन तथा अमेरिकी संविधान के संस्थापक, विशेषकर मेडीसन, हैमिल्टन और जैफरसन ने भी शक्तियों के विभाजन के सिद्धांत को पूरा समर्थन दिया। उन्होंने यह तर्क दिया कि शक्तियों के विभाजन से लोगों की स्वतंत्रता सुरक्षित रह सकती है।

व्यावहारिक तौर पर, संघीय राज्य एक समझौते पर सहमत होते है और एक राष्ट्र राज्य का सृजन करते है तथा उनके ऊपर जो शासन के कानून बनाये जाते है वो देश के मौलिक कानून भी माने जाते हैं। जिन मामलों में अलग कानून बनाया जाता है वह सभी संघों की राय के अनुसार बनाया जाता है ताकि इससे जो कार्य है वह राज्यों एवं राष्ट्रीय सरकारों के बीच सुगमता से हो सके। यह इस बात पर भी निर्भर करता है कि सभी संघीय राज्य अपने सभी मामलों में भौगोलिक, आर्थिक, सामाजिक इत्यादि में समान विचार सामने आये। लेकिन एक बार यह समझौता हो जाये तो फिर संघवाद के लिए अनिवार्य माना जाता है।

प्रत्येक संघ में शक्तियों के विभाजन की योजना राजनीतिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर की जाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में जब संप्रभु राज्य ने संघ में रहने की बात कही तो उसने राष्टीय सरकार के सामने अपनी असीमित शक्तियों को समर्पण करने से मना कर दिया तथा अपनी स्थायी शक्तियों को छोड़ने को इच्छुक नहीं थे। इस प्रकार

केवल एक ही सूची है जिसमें राष्ट्रीय सरकार की शक्तियाँ है तथा अवशिष्ट शक्तियाँ सभी इकाईयों के पास में है। जब कनाडा के संघ का निर्माण हुआ, तब उनके सामने अमेरिका के संविधान का उदाहरण था, जिन्होंने यह सुझाव दिया गया है कि केन्द्र के पास अधिक शक्तियां होनी चाहिए। इस प्रकार जो योजना शक्तियों के विभाजन की कनाडा के संविधान में दी गयी है वह बिल्कुल अलग है। राष्ट्रीय सरकार और प्रांतों में जो विषय कानून बनाने के लिये निर्धारित किये गये है उन्हें दो भागों में बांटा गया हैं। बाकी अवशिष्ट शक्तियों को डोमिनियन संग्रह के पास छोड़ी गयी है। जिन लोगों ने आस्ट्रेलिया के संविधान की रचना की वे अमेरिकी संविधान से प्रभावित थे, और उन्होंने भी केवल एक सूची को अपनाया जिसमें राष्ट्रीय सरकार के पास शक्तियाँ थी तथा अवशिष्ट शक्तियाँ राज्यों के पास थी।

महात्मा गांधी ने विकेन्द्रीकरण की बात की थी। उन्होंने राम–राज्य के बारे में बात की और कहा कि शक्तियों का विभाजन किया जाना चाहिये जो ग्राम–पंचायत से शुरू होकर राष्ट्रीय स्तर तक जाये। जहां तक ब्रिटिश राज में प्रशासनिक इतिहास का संबंध है भारत सरकार अधिनियम 1935 के तहत् तीन सूचियों के तहत् विधायी शक्तियों को इंकित किया गया, संघ सूची, प्रांतीय सूची और समवर्ती सूची, तथा अवशिष्ट शक्तियों को गवर्नर–जनरल को दिया गया। जिसे वे केन्द्र सरकार या प्रांतीय सरकार को दे सकते थे। यह विशेष व्यवस्था इसलिये की गयी क्योंकि उस वक्त की परिस्थितियां अनुकूल नहीं थी, हिन्दू एक मजबूत केन्द्र के पक्ष में थे, जबकि मुस्लिम मजबूत प्रांतों के पक्षधर थे।

प्रत्येक महासंघ में शक्तियों के विभाजन को संविधान में दर्शाया गया है, जो कि उसकी प्रकृति और चरित्र के अनुसार नीतियों के ऊपर सहमति से बना हो। विधायी शक्तियों के विभाजन में जो भी विविधताऐं या अंतर हो, लेकिन एक बात सभी संघों में समान है कि सभी संघों में विधायी शक्तियों का विभाजन किया गया है, और यह विभाजन सभी संघों को कार्यपालिका की शक्तियां निर्धारित करने का अधिकार देता है।

## 10.3 भारत के संविधान में शक्तियों का विभाजन

केन्द्र एवं प्रांतीय सरकारों के बीच शक्तियों के विभाजन से संबंधित प्रावधान भारतीय संविधान के भाग 11 अनुच्छेद 246 में रखा गया हैं यह भाग दो अध्यायों में विभाजित है। विधायी संबंध एवं प्रशासनिक संबंध। भारतीय संविधान ने इस व्यवस्था को अपनाया है जिसमें, विधायी शक्तियों की दो सूची है एक केन्द्र के लिए तथा दूसरी राज्य के लिए। अवशिष्ट शक्तियाँ केन्द्र के पास छोड़ दी गयी हैं। यह व्यवस्था कनाडा के संविधान से मिलती जुलती है। ऑस्ट्रेलिया के संविधान को मानने के बाद इसमें एक अतिरिक्त सूची को जोड़ा गया है, जिसका नाम है समवर्ती सूची। संविधान सभा ने शक्तियों के विभाजन की व्यवस्था को अपनाया, जो कि भारत सरकार अधिनियम 1935 में दिया गया था। उन पर केन्द्र सरकार, राज्य सरकार एवं दोनों कानून बना सकती है। ये सूची संघ सूची, राज्य सूची एवं समवर्ती सूची के नाम से प्रचलित है।

### 10.3.1 संघ सूची

संघ सूची में 97 विषय शामिल है। यह सबसे बड़ी सूची है तीनों सूचियों में। इसमें वे विषय शामिल है जो राष्ट्रीय महत्व के हैं। ये विषय इस प्रकार हैं :– रक्षा, सशस्त्र सेना, शस्त्र एवं गोलाबारूद, परमाणु उर्जा, विदेशी मामले, युद्ध एवं शांति, नागरिकता, प्रत्यर्पण, रेलवे, जहाज और पनडुब्बी, वायुमार्ग, डाक एवं टेलीग्राफ, टेलीफोन, वायरलेस और प्रसारण, मुद्रा, विदेशी व्यापार, अंतर–राज्य व्यापार और वाणिज्य बैंकिंग, जीवन–बीमा, उद्योगों पर

नियंत्रण, खानों का नियामक और विकास, तेल संसाधन और खनिज पदार्थ, चुनाव, सरकारी खातों का लेखा, सर्वोच्च न्यायालय का संगठन एवं गठन, उच्च न्यायालय एवं संघ लोक सेवा आयोग, आयकर, सीमा शुल्क निर्यात शुल्क, निगम कर, संपति के मूल्य पर कर, परिसंपति शुल्क, टर्मिनल भवसान कर, इत्यादि। संसद को इस सूची में दिये गये विषयों पर कानून बनाने का अधिकार है।

### 10.3.2 राज्य सूची

राज्य सूची में 66 विषय है। इनमें से महत्वपूर्ण विषय इस प्रकार है। सार्वजनिक व्यवस्था, पुलिस, न्याय का प्रशासन, जेल, स्थानीय सरकार, सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं स्वच्छता, शिक्षा, कृषि, पशु पालन, जलापूर्ति और सिंचाई, भू अधिकार, जंगल, मछली पालन, रकम उधार देना, राज्य लोक सेवा आयोग, भू–राजस्व, कृषि आय पर कर देना, भूमि एवं मकान पर कर, संपत्ति कर शुल्क, विद्युत कर, वाहन कर, विलासिता कर, इत्यादि। इन विषयों का चुनाव स्थानीय हित के आधार पर होता है। ये विषय देश की विविधता को भी ध्यान में रखकर दिये गये है क्योंकि देश के विभिन्न राज्यों में भिन्न–भिन्न विषय दिये गये हैं।

### 10.3.3 समवर्ती सूची

समवर्ती सूची में 47 विषय है। ये विषय केन्द्र और राज्य दोनों की परिधि के अंतर्गत आते है। इनके उपर कानून बनाने का अधिकार केंन्द्र एवं राज्य दोनों को है। इस सूची में निम्न विषय हैः– विवाह एवं तलाक, कृषि भूमि के अतिरिक्त संपत्ति का स्थानांतरण, ठेकेदारी, दिवालियापन और दिवाला, ट्रस्टी और ट्रस्ट, नागरिक प्रक्रिया, न्यायालय की अवमानना, खाने की चीजों में बदलाव, डर्ग एवं विष/जहर, आर्थिक एवं सामाजिक येाजना, ट्रेड यूनियन, सुरक्षा, श्रमिक कल्याण, विद्युत, अखबार, किताबें तथा मुद्रणालाय, स्टाम्प शुल्क इत्यादि। भारत की संसद तथा राज्यों की विधानसभा को इस सूची के विषयों पर कानून बनाने का समवर्ती अधिकार दिया गया है। यदि एक बार संसद ने इस सूची के विषयों पर कानून बना दिया तो संसद के कानून राज्य के बनाये कानूनों पर लागू होंगे। इसके लिए एक विशेष स्थिति में यह बदल भी सकता है। इसके अनुसार यदि, विधानसभा ने कोई कानून पहले बना लिया हो और वह राष्ट्रपति के पास मंजूरी के लिए भेजा जा चुका हो ऐसी स्थिति में विधानसभा द्वारा बनाया कानून मान्य होगा। इससे राज्यों की विधानसभा की ताकत को भी सशक्त बनाया गया है। इसमें यह भी प्रावधान है कि किसी विशेष स्थिति या परिस्थिति में राज्य को अधिकार दिया गया है।

## 10.4 कानून बनाने की अवशिष्ट शक्तियां

अवशिष्ट शक्तियां वे हैं जो कि तीनों सूचियों से बाहर के विषय पर कानून बनाने के लिये दी गयी है। भारत में, अवशिष्ट शक्तियां केन्द्र के पास है। हालांकि राज्यों को भी कानून बनाने का अधिकार है लेकिन वे राज्य सूची के अंतर्गत आने वाले विषयों पर ही कानून बना सकते है। कुछ ऐसे विशेष मामलों में केन्द्र सरकार ही कानून बना सकती है। असाधारण मामलों में केन्द्र के पास अवशिष्ट शक्तियां होती है कानून बनाने के लिये। ये असाधारण मामले इस प्रकार है :–

क) अनुच्छेद 249 के अंतर्गत यह प्रावधान दिया गया है कि यदि राज्य सभा ने यह घोषित कर दिया कि संसद को राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखकर कानून बनाना चाहिये और यह प्रस्ताव दो तिहाई बहुमत से पास हो जाये तो यह कानून संपूर्ण देश के लिये वैद्य माना जायेगा जब तक यह प्रस्ताव जारी रहेगा। राज्यसभा हालांकि ऐसे

प्रस्ताव को एक वर्ष के लिये आगे और बढ़ा सकती है जिस तारीख से यह लागू किया गया था।

ख) अनुच्छेद 250 संसद को यह अधिकार देता है कि वह राज्य सूची में शामिल किसी भी विषय पर कानून बना सकती है। यह कानून पूरे देश में या किसी भी भाग में लागू किया जा सकता है यदि आपातकाल लगाया जा चुका हो। इस कानून को लागू करने की अधिकतम सीमा आपातकाल की समाप्ति तक या उसके छः महीने बाद तक वैद्य होती है।

ग) अनुच्छेद, 252 के अनुसार संसद दो या दो से अधिक राज्यों के लिये कानून बनाने को अधिकृत है लेकिन यह उन राज्यों की सहमति से होगी। यदि दो या दो से अधिक राज्य संसद या केन्द्र सरकार को किसी विशेष विषय पर जो कि राज्य सूची में हो, कानून बनाने के लिए कहा जाये तो संसद ऐसे विषयों पर भी कानून बना सकती है। यदि किसी कानून को बदलना हो या उसमें संशोधन करना हो तो यह केवल संसद ही कर सकती है, लेकिन इसकी शुरूआत राज्यों को करनी चाहिए।

घ) अनुच्छेद 253 के तहत् संसद को यह अधिकार है कि वह किसी संधि, समझौते या सम्मेलन को लागू करने के लिये कानून बना सके तथा यह समझौते किसी अन्य देशों के साथ हो, या अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन हो या संगठन और संस्था हों। इसमें यह भी प्रावधान है कि संसद ऐसे विषय पर भी कानून बना सकती है जो विषय राज्य सूची में शामिल हों।

ड़) अनुच्छेद 356 के अंतर्गत यह प्रावधान दिया गया है कि यदि राष्ट्रपति इस बात से संतुष्ट हो जाये कि राज्य में ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गयी है जिसमें राज्यपाल संविधान के प्रावधानों के अनुकूल कार्य करने में असमर्थ है तो राष्ट्रपति यह घोषित कर सकते है कि उस राज्य की कार्यपालिका संसद के द्वारा चलायी जायेगी। अनुच्छेद 356 के तहत् उस राज्य की विधानसभा या तो भंग की जायेगी या निलंबित की जायेगी और कानून बनाने की शक्ति संसद के पास होगी जब तक उस राज्य में आपातकाल या राष्ट्रपति शासन होगा।

च) न केवल संसद राज्यों में कानून बनाने को अधिकृत है बल्कि केन्द्रिय कार्यपालिका कुछ मामलों में अपना नियंत्रण भी रखती हैं अनुच्छेद 31, धारा3, में संम्पत्ति का अधिकार है, इसमें कहा गया है कि यदि राज्य की विधानसभा ने चल या अचल संपत्ति के अधिग्रहण पर विधेयक पारित किया हो तो वह विधेयक तब तक प्रभावी नहीं होगा जब तक इस पर राष्ट्रपति अपनी सहमति न दे दे। अनुच्छेद 200 में यह कहा गया है कि राज्यपाल को सहमति देने की बजाय इसे राष्ट्रपति के लिये संरक्षित रखा जायेगा यदि राज्यपाल की राय में ऐसा हो, यदि यह कानून बन जाये और उच्च न्यायालय की शक्तियों में कमी आ जाये तो यह खतरनाक है। क्योंकि कोर्ट को संविधान से शक्तियां मिली है। अनुच्छेद 200 के अतंर्गत राज्यपाल किसी विधेयक को अपने पास रख सकता है जो कि राज्य की विधानसभा ने पारित किया है ताकि उसे राष्ट्रपति की मंजूरी के लिए भेजा जा सके। वे ऐसा अपनी स्वेच्छा से कर सकते हैं या केन्द्र के निर्देश पर यह संविधान में नहीं हैं। सामान्य धारणा यह है कि राज्यपाल विधेयक को अपने पास रखते है तथा फिर उसे राष्ट्रपति के पास मंजूरी के लिए भेजा जाता है यदि कोई महत्वपूर्ण राजनीतिक मुद्दा इसमें शामिल हो तो।

### 10.4.1 सरकारिया आयोग

1983 में, केन्द्र सरकार ने सरकारिया आयोग का गठन किया था, जिसके अध्यक्ष न्यायमूर्ति आर. एस. सरकारिया थें इसका मुख्य उद्देश्य केन्द्र –राज्य संबंधों पर संविधान के प्रावधानों की समीक्षा करना था। संघ–राज्य संबंधों के मुद्दों पर विभिन्न राज्य सरकारों से चर्चा के बाद आयोग ने अपनी रिपोर्ट अक्टूबर 27, 1987 को सौंप दी थी। सरकारिया आयोग ने एक मजबूत केन्द्र का समर्थन किया जो कि एक मात्र राष्ट्रीय एकता के लिये आवश्यक है। इसने यह सिफारिश की कि अवशिष्ट शक्तियाँ संसद के पास रहनी चाहिए ये जिसमें मुख्य तौर पर करों से संबंधित विषय शामिल है जबकि अन्य विषय करों के अतिरिक्त समवर्ती सूची में रखे जाने चाहिये। लेकिन इसने संघीय सरकार के अंदर केन्द्रियकरण की शक्तियों का समर्थन नहीं किया था। इस आयोग ने एक स्थायी तौर पर अनुच्छेद 263 के अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय परिषद की स्थापना की सिफारिश की थी, ताकि यह केन्द्र एवं राज्यों से संबंधित समस्याओं के बारे में चर्चा कर सके। इसने शक्तियों के विभाजन के लिए संतुलन बनाने की कोशिश की थी। इसने यह सुझाव दिया कि जब भी केन्द्र सरकार समवर्ती सूची में शामिल किसी भी विषय पर कानून बनाने का विचार करती है तो उसे राज्य सरकारों से पूर्व अनुमति लेनी चाहिये तथा इसे अंतर्राज्जीय–परिषद में भी सामूहिक रूप से चर्चा करनी चाहिये, अनुच्छेद 268 के तहत्। सरकारिया आयोग रिपोर्ट की सिफारिशों के अनुसार राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने 25 मई 1990 को राष्ट्रपति के अध्यादेश से अन्तर्राज्यीय–परिषद के गठन की स्थापना की। इस परिषद में प्रधानमंत्री, सभी राज्यों के मुख्यमंत्री, केन्द्र–शासित प्रदेशों के मुख्यमंत्री और केन्द्र सरकार के छः केबिनेट मंत्री शामिल हैं। इस परिषद के अध्यक्ष प्रधानमंत्री है, तथा उनकी अनुपस्थिति में कोई भी केबिनेट मंत्री जिसे प्रधानमंत्री ने नियुक्ति किया हो। यह परिषद मुद्दों के उपर अपने दिशा निर्देश तय करती है और चर्चा के लिये परिषद में लाती है। इसकी मीटिंग वर्ष में तीन बार बुलाने का भी प्रावधान है। इसने यह भी सिफारिश की कि, किसी उच्च कोटी के व्यक्ति को राज्यपाल नियुक्त किया जाना चाहिये तथा अनुच्छेद 356 के तहत् राष्ट्रपति शासन की सिफारिश को न्यायिक समीक्षा के अंतर्गत रखना चाहिये। इसने यह भी सिफारिश की, कि करों एवं शुल्कों के बीच साध्यता होनी चाहिये, निगम कर का केन्द्र एवं राज्यों के बीच बंटवारा होना चाहिये, तथा अंतर राज्य जल विवाद के लिये एक ट्रिब्यूनल का गठन किया जाना चाहिये। ट्रिब्यूनल का गठन आवेदन के मिलने के एक वर्ष के अंदर हो जाना चाहिये ताकि यह पांच वर्षों में प्रभावी रूप से कार्य कर सके।

अप्रैल 2007 में, यूपीए सरकार ने पुंक्षी आयोग का गठन किया, जिसके अध्यक्ष न्यायमूर्ति एम.एम. पुंक्षी थे। इसका गठन विभिन्न स्तर पर सरकारों की भूमिका एवं उतरदायित्व की समीक्षा करना तथा केन्द्र–राज्यों के संबंधों की समीक्षा करना था। इसमें पंचायती राज संस्थाऐं, स्थानीय निकाय तथा उनका आंतरिक संबंध भी शामिल था। इस आयोग ने अपनी रिपोर्ट 2010 में प्रस्तुत की थी। इसने 312 सिफारिशें की थी। इन सिफारिशों आंतरिक सुरक्षा तथा सांप्रदायिक हिंसा भी शामिल थी।

**अभ्यास प्रश्न 1**

**नोटः** i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) भारतीय संविधान में शक्तियों के विभाजन की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) सरकारिया आयोग की सिफारिशें कौन–कौन सी थी।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

## 10.5 प्रशासनिक और वित्तिय शक्तियों का विभाजन

संविधान में इस बात पर अधिक जोर दिया गया है कि केन्द्र और राज्यों के बीच प्रशासनिक सहयोग होना चाहिये। अनुच्छेद 261 के अनुसार इस बात पर अधिक बल दिया गया है कि लोक अधिनियम, रिकार्ड और न्यायिक प्रकिया केन्द्र एवं राज्यों के बीच सुचारू रूप से एवं सहयोगात्मक तरीके से भारतीय संघ के सभी भाग में होनी चाहिये। जिस प्रकार से इन अधिनियमों एवं रिकार्डस को प्रदान किया जायेगा, तथा प्रभाव निर्धारित होगा वे संसदीय अधिनियम द्वारा प्रदान किये जायेंगे। अनुच्छेद 262 के अनुसार जिसमें अन्तर–राज्यीय नदियों के जल, तथा नदी–घाटियों का संबंध है, संसद अपने कानून द्वारा किसी भी विवाद, जल का उपयोग, पानी का बंटवारा या उसका समाधान कर सकती है।

संविधान में केन्द्र एवं राज्यों के बीच वित्तिय संबंधों का भी प्रावधान है ताकि फंड में बढ़ोतरी हो सके। अनुच्छेद 292 के अंतर्गत केन्द्र सरकार संघ की कार्यपालिका शक्ति के अनुसार संसद द्वारा विधि के अधीन नियत सीमाओं के भीतर भारत की संचित निधि से उधार लिया जा सकता है। इसके लिये संविधान कोई क्षेत्रीय सीमा निर्धारित नहीं करता है। अनुच्छेद 293 राज्य सरकारों को उधार की सीमा निर्धारित करता है। वे भारत के बाहर उधार नहीं ले सकते । कोई भी राज्य भारत की सीमाओं के भीतर ही उधार ले सकता है वो भी राज्य की संचित निधि की सुरक्षा के लिए। उधार की सीमा उस राज्य की विधानसभा द्वारा तय की जाती है। अनुच्छेद 205 के अंतर्गत संध की सम्पति को राज्यों के करों से छूट होगी जब तक कि संसद कोई प्रावधान न कर दे। वित्तिय आपातकाल के दौरान राष्ट्रपति संघ और राज्यों के बीच करों के विभाजन से संबंधित प्रावधानों को निरस्त कर सकते हैं। दसवें वित्त आयोग की सिफारिशों के बाद वैकल्पिक तौर पर केन्द्र एवं राज्यों के बीच करों का बंटवारा किया जाने का प्रावधान है जो कि 88वां संविधान संशोधन अधिनियम 2000 में पारित हो चुका है। इस संशोधन के अनुसार, संघ अपने करों का 29 प्रतिशत राज्यों को देगा जो कि उनके आयकर, उत्पाद शुल्क, विशेष शुल्क तथा रेलवे यात्री भाड़ा से अलग होगा।

**अभ्यास प्रश्न 2**

**नोट :** 1) अपने उत्तर के लिये निम्न रिक्त स्थान का प्रयोग करें

2) इस इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर की जाँच करें।

1) केन्द्र और राज्यों के बीच प्रशासनिक एवं वित्तिय शक्तियों के प्रावधान की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

## 10.6 सारांश

भारतीय संविधान में उल्लेखित शक्तियों के विभाजन का संकेत हमें भारत सरकार अधिनियम, 1935 से मिलता है। भारतीय संविधान में शक्तियों के विभाजन को तीन सूचियों में रेखांकित किया गया है। संघ सूची, राज्य सूची तथा समवर्ती सूची। अवशिष्ट शक्तियां जो किसी भी सूची में नहीं दी गयी है उन पर कानून बनाने का अधिकार केन्द्र सरकार के पास है। केन्द्र और राज्य संबंधों की समीक्षा सरकारिया आयोग ने की थी। सरकारिया आयोग की सिफारिशों में अवशिष्ट समितियों का भी जिक्र था। इस संबंध में इस आयोग ने यह सुझाव दिया कि करों के ऊपर कानून बनाने की अवशिष्ट शक्तियां केन्द्र के पास होनी चाहिए और करों से अलग अन्य विषयों पर कानून बनाने के लिए समवर्ती सूची में शामिल किया जाना चाहिये। सरकारिया आयोग ने अन्तर्राज्जीय परिषद के गठन की भी सिफारिश की थी। संविधान में प्रशासनिक और वित्तिय मामलों में केन्द्र और राज्यों के बीच संबंध का भी प्रावधान है।

## 10.7 उपयोगी संदर्भ

ऑस्टिन, ग्रेनविल, (2012), भारतीय संविधान, राष्ट्र की आधारशिला, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई–दिल्ली

बक्षी, पी. एम. (2003), भारत का संविधान, यूनिवर्सल लॉ प्रकाशन, दिल्ली

बसु डी. डी. (2011), भारतीय संविधान का परिचय, लोर्क्सस, लेक्सिस, बटरवर्थ, वाधवा नागपुर

राव, एम. गोविन्द और सिंह, निरविकार (2005), भारत में संघवाद की राजनीतिक अर्थव्यवस्था ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली

नांरग, ए. एस. (2000), भारतीय शासन और राजनीति, गीतांजली नई दिल्ली, वीजापुर।

अब्दुल रहीम, पी. (1998), राष्ट्र निर्माण के संघीय मापदंड, सेंटर फोर फेडरल स्टडीज एण्ड मानक प्रकाशन नई दिल्ली, 1998 ।

## 10.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

**अभ्यास प्रश्न 1**

1) संविधान के भाग 11 में केन्द्र और राज्यों के बीच शक्तियों के विभाजन की योजना का प्रावधान है। जो विषय केन्द्र, राज्यों एवं दोनों को मिलकर कानून बनाने का अधिकार है वे तीन सूचियों में विभाजित किये गये है। संघ सूची, राज्य सूची एवं समवर्ती सूची। संघ सूची के विषयों में वे विषय है जिन पर केवल केन्द्र को कानून बनाने का अधिकार है। राज्य सूची के विषयों पर राज्य सरकार को कानून बनाने का अधिकार है जबकि समवर्ती सूची के विषयों पर केन्द्र एवं राज्य दोनों को कानून बनाने का अधिकार दिया गया है। जो विषय इन तीनों सूचियों में नहीं दिये गये हैं वे विषय अवशिष्ट विषय हैं और उन्हें अवशिष्ट शक्तियों भी कहते हैं। अवशिष्ट शक्तियाँ केवल केन्द्र सरकार के पास होती है।

2) सरकारिया आयोग का गठन 1983 में हुआ था। इसके अध्यक्ष आर. एस. सरकारिया थे। इसका मुख्य उद्देश्य भारत में संघवाद की कार्यप्रणाली की समीक्षा करना था। इसने अपनी रिपोर्ट 1987 दी थी। अपनी सिफारिशों में इस आयोग ने अवशिष्ट शक्तियों को केन्द्र एवं राज्य दोनों के बंटवारा किया था। इसमें कहा गया कि करों से संबंधित मसलों पर केन्द्र सरकार कानून बनाये जबकि करों के अलावा विषयों पर समवर्ती सूची में रखा जाना चाहिये। केन्द्र और राज्यों के बीच अच्छे संबंध बनाने के लिये इस आयोग ने एक अन्तर्राज्यीय परिषद के गठन की भी सिफारिश की थी।

**अभ्यास प्रश्न 2**

1) संविधान में इस बात पर जोर दिया है कि केन्द्र और राज्यों के बीच में प्रशासनिक सहयोग होना चाहिये। संविधान में जल के प्रबंधन, जल के बंटवारे एवं उसके ऊपर नियंत्रण के प्रावधान है तथा जल से संबंधित विवादों का समाधान है। संविधान में केन्द्र और राज्यों द्वारा उधार का भी प्रावधान है। केन्द्र किसी भी स्रोत से उधार ले सकता है चाहे वह देश से बाहर ही क्यों न हो लेकिन राज्य देश के अंदर ही उधार ले सकते हैं।

# इकाई 11 आपातकालीन प्रावधान*

**संरचना**


11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

11.2.1 संविधान सभा में बहस

11.3 आपातकाल के प्रकार

11.3.1 राष्ट्रीय आपातकाल (अनुच्छेद 352)

11.3.2 राज्यों के आपातकाल (अनुच्छेद 356)

11.3.3 वित्तिय आपातकाल (अनुच्छेद 360)

11.4 आपातकालीन प्रावधानों का दुरुपयोग

11.5 सारांश

11.6 उपयोगी संदर्भ

11.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर


## 11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह जान सकेंगे :

- आपातकालीन प्रावधानों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य;
- आपातकाल के प्रकार;
- आपातकाल के प्रावधानों की प्रमुख विशेषताएं; और
- आपातकालीन प्रावधानों का दुरुपयोग।

## 11.1 प्रस्तावना

आपातकाल वह है जब कार्यपालिका किसी राजनीतिक व्यवस्था में व्यक्तियों की स्वतंत्रता के अधिकार पर प्रतिबंध लगाती है। भारत में, इस प्रकार के प्रतिबंध संविधान के प्रावधान के तहत् लगाये जाते है। जिन्हें हम आपातकालीन प्रावधान कहते हैं। आपातकाल कुछ गंभीर परिस्थितियों में लगाया जाता है। जैसे – युद्ध, बाहरी आक्रमण, आंतरिक उथल–पुथल, सैनिक विद्रोह या वित्तिय संकट, इत्यादि। यह लोगों की स्वतंत्रता पर अंकुश लगाता है। भारतीय संविधान में आपातकालीन प्रावधानों को भाग 18 में अनुच्छेद 352 से 360 के बीच रखा गया है। आपातकाल की घोषणा का आदेश राष्टपति द्वारा पारित किया जाता है। राष्ट्रपति मंत्रिमंडल की सलाह पर यह घोषणा करता है। हालांकि आपातकाल के दौरान वास्तविक शक्तियों का प्रयोग प्रधानमंत्री करता है। आपातकाल के दौरान संघीय कार्यपालिका राज्यों की कार्यपालिका को निर्देश भी दे सकती है तथा परिस्थिति संसद कानून भी बना सकती है जो कि संघीय सूची में शामिल न हो। आपातकाल के दौरान राज्य की सत्ता केन्द्र की सत्ता के अधीन कार्य करती है।


*जयंत देबनाथ, सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान संकाय, मृनालिनी दत्ता, महाविद्यापीठ, कोलकता।

## 11.2 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

आपातकालीन प्रावधानों को शामिल करने की जरूरत भारत में कठिन राजनीतिक परिस्थितियों में महसूस की गयी थी। भारत के संविधान में आपातकालीन प्रावधानों का विवरण है जो कि विश्व के अन्य संविधानों से लिया गया था, विशेषकर जर्मनी से एवं भारत सरकार अधिनियम 1935 से। भारतीय संविधान में भारत सरकार अधिनियम 1935 के प्रावधान सम्मिलित किये गये हैं जिसमें आपातकालीन प्रावधान थे। केन्द्र के मामले में खण्ड 45 तथा प्रांतों में खण्ड 93 का प्रावधान दिया गया था। इसमें मुख्य कार्यपालिका को आपातकाल की घोषणा करने का अधिकार दिया गया था। भारत सरकार अधिनियम 1935 का मकसद था भारत में प्रांतीय स्वायत्ता प्रदान करना। लेकिन इसके आपातकालीन प्रावधान भी थे जिसमें प्रांतों की स्वायत्ता पर प्रतिबंध का भी प्रावधान था। इसके अंदर केन्द्र एवं प्रांतों की इकाइयों के बीच संबंधों का प्रश्न था। अधिनियम ने यह सुझाव दिया कि केन्द्र को प्रांतों के मामलों में दखल देना चाहिये यदि कोई आपातकालीन स्थिति पैदा हो गयी हो जैसे कि युद्ध, आंतरिक अशांति इत्यादि। ऐसे मामलों में जहां प्रशासन की कार्यप्रणाली ठप्प हो गयी हो। ऐसे समय में, जब केन्द्र के पास कानून बनाने की शक्ति आ जाती है तब केन्द्र को सभी मामलों में कानून बनाने का अधिकार आ जाता है। प्रांतीय विषयों में भी केन्द्र कानून बनाने का अधिकार रखता है। प्रांतों में गवर्नर जनरल को आपातकाल की घोषणा करने का अधिकार दिया गया था। भारत सरकार अधिनियम 1935 के अलावा जर्मनी के संविधान से भी आपातकालीन प्रावधानों को भारतीय संविधान में शामिल करने में काफी योगदान रहा। गवर्नर जनरल के पास विशेष जिम्मेदारी दी, भारत में शांति एवं व्यवस्था कायम करने की। वे प्रांतीय सरकारों में स्वतंत्र रूप से कार्य करने को अधिकृत थे। तथा वे राज्यपाल के प्रमुख सूचना के स्त्रोत भी थे।

### 11.2.1 संविधान सभा में बहस

संविधान में आपातकालीन प्रावधानों को शामिल करने के उपर संविधान सभा के सदस्यों के बीच काफी मतभेद थे। ग्रेनविल ऑस्टिन के अनुसार, ए. के. अय्यर, और के. एम. मुंशी स्वतंत्रता पर अंकुश लगाने के समर्थक थे। के. एम. मुंशी ने इस बात का समर्थन किया कि आपातकाल के समय केन्द्र सरकार को यह अधिकार होना चाहिये कि वह स्वतंत्रता के अधिकार को निरस्त कर सके। उनके विचारों को ''अधिकारों की उप–समिति'' ने भी समर्थन किया। एक या दो को छोड़कर। अय्यर ने यह सुझाव दिया कि संविधान में उल्लेखित अधिकार लोक सम्मत, सुरक्षा एवं रक्षा तक महत्व रखते है। उन्होंने अपने विचारों को इन उदाहरणों से सही साबित किया कि बंगाल एवं असम में काफी गड़बड़ी थी तथा पंजाब एवं उत्तर पूर्वी प्रांतों में सांप्रदायिक दंगे थे। हालांकि मूल अधिकारों को निरस्त करने के सुझाव का तीन लोगों ने विरोध किया था। वे थे के. टी. साह, एच. वी. कामथ तथा एच. एन.कुजरू। वित्तिय आपात के संदर्भ में एच. एन. कुन्जरू ने कहा कि ये राज्य के वित्तीय स्वायत्ता के लिए काफी गंभीर खतरा है। दोनों प्रकार के विचारों के बाद समिति ने एक नया संस्करण तैयार किया। ताकि आपातकाल के समय अधिकारों को निरस्त करने को समर्थन नहीं किया। इस नये संस्करण ने अनुच्छेद 32 के अंतर्गत संविधानिक उपचारों के तहत् संसाधनों के निरस्तीकरण को मंजूरी दी। मौलिक अधिकारों के निरस्तरीकरण को न्यायिक समीक्षा की परिधि से दूर रखा गया जब तक कि 1978 में 44वां संविधान संशोधन पारित नहीं हुआ।

## 11.3 आपातकाल के प्रकार

जैसा कि आप पढ़ चुके हैं भारत में आपातकाल की घोषणा राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। यहां यह जानना महत्वपूर्ण है कि आपातकाल के दौरान, सभी कार्य राष्ट्रपति के नाम पर किये जाते है, लेकिन वास्तव में असली शक्तियां केन्द्र सरकार या प्रधानमंत्री के पास होती है। हमारे यहां तीन प्रकार की आपातकालीन व्यवस्था है जो कि विभिन्न आधारों पर घोषित की जाती है। ये तीन आपातकाल है – राष्ट्रीय आपातकाल, राज्यों के अंदर आपातकाल तथा वित्तिय आपातकाल। आये इनके बारे में नीचे विस्तार से पढ़ेगे।

### 11.3.1 राष्ट्रीय आपातकाल (अनुच्छेद 352)

संविधान के अनुच्छेद 352 के अनुसार भारत में राष्ट्रीय आपातकाल इन परिस्थितियों में लगाया जा सकता है :– युद्ध, बाहरी आक्रमण, आंतरिक उथल–पुथल या सशस्त्र विद्रोह संपूर्ण भारत में या भारत के किसी भाग में । 44 वे संशोधन में 'आंतरिक उथल–पुथल' शब्द का बदलकर सशस्त्र विद्रोह कर दिया गया। राष्ट्रपति केबिनेट के निर्णय के पश्चात् आपातकाल की घोषणा कर सकते हैं। कैबिनेट लिखित में आपातकाल के पक्ष में यह निर्णय लेती है फिर वह राष्ट्रपति को बताती है। राष्ट्रपति राष्ट्र के हित को ध्यान में रखते हुए एवं अपने आप को संतुष्ट मानते हुए ऐसी घोषणा करते हैं। अनुच्छेद 359 एवं 359 के अनुसार राष्ट्रपति को मूल अधिकारों को निरस्त करने का अधिकार है सिवाय अनुच्छेद 20 एवं अनुच्छेद 21 के। (जुर्म के मामले में सुरक्षा करने का अधिकार तथा जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार) राष्ट्रीय आपातकाल के दौरान केन्द्र सरकार की शक्तियां राज्यों के विधायी एवं कार्यपालिका के अधिकार क्षेत्र तक पहुंच जाती है। केन्द्र, राज्यों को कार्यपालिका शक्तियों को ठीक से इस्तेमाल करने का निर्देश दे सकता है। अनुच्छेद 353 में संसद को यह अधिकार दिया गया है कि वह संघ सूची में शामिल नहीं किये विषयों पर भी कानून बना सके। इसमें राज्य सूची के अंतर्गत आने वाले विषय भी शामिल है (अनुच्छेद 250)। आपातकाल के दौरान राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है कि वे केन्द्र एवं राज्यों के बीच वित्तिय संसाधनों का आंवटन कर सके (अनुच्छेद 253)। किसी भी प्रकार की आपातकाल को संसद के दोनों सदनों के समक्ष रखना आवश्यक है। यदि दोनों सदन एक महीने के अंदर आपातकाल की घोषणा को मंजूरी नहीं देते है तो ऐसी स्थिति में आपातकाल निरस्त माना जायेगा। यदि आपातकाल की घोषणा के दौरान लोकसभा भंग हो जाती है तो ऐसी स्थिति में भी आपातकाल को समाप्त कर दिया जायेगा। यदि यह मामला राज्य सभा में पारित हो लेकिन लोकसभा में नहीं तो भी घोषणा निरस्त मानी जायेगी। इसके लिए एक महीने का समय निर्धारित किया गया है। आपातकाल की घोषणा यदि दोनों सदनों द्वारा पारित कर दी जाती है तो यह छः महीने पश्चात् समाप्त हो जायेगी। इसे छः महीने के लिये आगे और बढ़ाया जा सकता है। आपातकाल की घोषणा को मंजूरी के लिए दो–तिहाई बहुमत की आवश्यकता होती है। दोनों सदनों में उपस्थित सदस्य इस पर मतदान करते हैं। इसके अलावा यदि लोक सभा आपातकाल की घोषणा के खिलाफ एक प्रस्ताव पारित कर दे तो यह अमान्य हो जायेगी। यदि ऐसे प्रस्ताव का नोटिस सदन के कुल सदस्यों को दसवाँ भाग इस पर हस्ताक्षर करके राष्टपति को दे या लोकसभा अध्यक्ष को दे तो इसपर 14 दिनों के अंदर एक विशेष सत्र बुलाया जाता है ताकि इस पर चर्चा हो सके।

भारतीय संविधान में न्यायिक पुनरावलोकन का प्रावधान है। इसका अर्थ है कि न्यायपालिका को यह अधिकार दिया गया है कि वह विधायिका द्वारा पारित किसी भी कानून की समीक्षा कर सकती है तथा संविधान की व्याख्या भी कर सकती है। यदि कानून संविधान के

प्रावधानों के अनुसार नहीं है तो वह ऐसे कानून को अमान्य घोषित कर सकती है। लेकिन आपातकाल की घोषणा को 42वें संविधान संशोधन द्वारा न्यायिक समीक्षा की परिधि से हटा दिया गया है। लेकिन 1978 में फिर से 44वें संशोधन द्वारा इसे बहाल कर दिया गया। आपातकाल की घोषणा का संसद के दोनों सदनों द्वारा दो महीने के भीतर मंजूरी लेना जरूरी है। यदि इस समय के अंतर्गत संसद से मंजूरी नहीं ली गयी तो यह आपातकाल निस्प्रभावी माना जायेगा। एक बार संसद से मंजूरी लेने के बाद आपातकाल छः महीने तक जारी रहता है जब तक कि राष्ट्रपति इसे समय पूर्व हटा नहीं लेते।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, तीन बार देश में राष्ट्रीय आपातकाल लगाया गया है। पहला, 1962 से 1968 तक, जब भारत एवं चीन के बीच युद्ध हुआ था। दूसरी बार 1971 से 1977 तक जब भारत एवं पाकिस्तान के बीच युद्ध हुआ था तथा तीसरी बार 25 जून 1975 से 21 मार्च 1977 तक। पहले दो बार आपातकाल युद्ध की वजह से लगाया गया था लेकिन तीसरी बार आपातकाल केन्द्र सरकार द्वारा आंतरिक उथल–पुथल की वजह से लगाया गया था।

### 11.3.2 राज्य आपातकाल (अनुच्छेद 356)

राज्य आपातकाल प्रायः राष्ट्रपति शासन के नाम से भी जाना जाता है। राज्यों के अंतर्गत आपातकाल तब लगाया जाता है, जब राज्यों में संविधानिक संकट उत्पन्न हो गया हो। लगभग सभी राज्यों में केवल दो राज्यों को छोड़कर छत्तीसगढ़ और तेलंगाना जो कि अभी नये राज्य बनाये गये हैं अलग–अलग समय पर आपातकाल लगाया जा चुका है। राज्यों में आपातकाल राष्ट्रपति द्वारा लगाया जाता है जब वे राज्यपाल द्वारा दी गयी रिपोर्ट से संतुष्ट हो गये हों कि राज्य में संविधानिक तंत्र पूरी तरह से विफल हो गया है। राष्ट्रपति शासन इन परिस्थितियों में लगाया जाता है :– यदि राज्य विधानमंडल अपने नेता यानी मुख्यमंत्री चुनने में असफल हो गया हो, गठबंधन का बिखर जाना, यदि कुछ कारणों से चुनाव नहीं कराये जा सके हों तथा विधान सभा में सरकार का बहुमत खो देना। हालांकि राज्यों में आपातकाल राष्ट्रपति द्वारा लगाया जाता है लेकिन राज्यपाल ही राष्ट्रपति के प्रतिनिधि के रूप में राज्य की बागडोर संभालते है। इसे हम राज्यों में केन्द्र शासन भी कहते है। केन्द्र शासन को राष्ट्रपति शासन कहते है। यह जम्मू एवं कश्मीर में नहीं लगाया जाता, उसमें केवल राज्यपाल का शासन होता है। राष्ट्रपति, राज्यपाल के द्वारा कार्यपालिका एवं विधायिका की शक्तियों का इस्तेमाल करता है। लेकिन उनके कार्यो में न्यायपालिका के कार्य नहीं आते है।

### 11.3.3 वित्तीय आपातकाल (अनुच्छेद–360)

अनुच्छेद 360 के अनुसार वित्तीय आपातकाल भारत में वित्तीय अस्थिरता या संकट की स्थिति में लगाया जाता है। अभी तक भारत में वित्तीय आपातकाल नहीं लगाया गया है। यदि भारत में वित्तीय आपातकाल लगाने की नौबत आई तो इसे संसद द्वारा पारित किया जाना आवश्यक है। इसे संसद के दोनों सदनों के समक्ष रखना होगा। यदि इस दौरान लोकसभा का विघटन हो जाये तो वित्तीय आपात भी स्वतः ही समाप्त हो जायेगा। तीस दिनों की समाप्ति के बाद तथा यह पुनर्गठन तक जारी रहेगा। वित्तीय आयात के दौरान राष्ट्रपति सरकारी अफसरों के वेतन एवं भत्तों में कटौती करने का आदेश दे सकता है उनमें उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश भी शामिल होंगे। यहां तक कि अनुच्छेद 207 के अधीन धन विधेयकों तथा अन्य विधेयकों को राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित रखा जाए जब वे राज्य विधानमंडलो द्वारा पारित कर दिये जाऐं। जम्मू और कश्मीर के मामले में वित्तीय आपातकाल नहीं लगाया जा सकता क्योंकि उसे अनुच्छेद 370 के तहत् विशेष राज्य का दर्जा दिया गया है।

**अभ्यास प्रश्न 1**

**नोट:** i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) भारत में आपातकालीन प्रावधानों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य क्या था?

.....

.....

.....

.....

.....

2) भारतीय संविधान में दिये गये आपातकाल के विभिन्न प्रावधानों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

## 11.4 आपात प्रावधानों का दुरूपयोग

जैसा कि आपने पढ़ा होगा कि आपातकालीन प्रावधानों का प्रयोग भारत में राष्ट्रीय आपातकाल लगाने एवं राष्ट्रपति शासन लगाने में किया गया है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में तीन बार राष्ट्रीय आपातकाल लगाया जा चुका है। दो बार देश में बाहरी आक्रमण से सुरक्षा करने के लिए राष्ट्रीय आपातकाल लगाया जिसमें 1962 में भारत–चीन युद्ध के समय तथा 1971 में भारत–पाक युद्ध के समय। लेकिन 1975 में इसे राजनीतिक कारणों से इसका प्रयोग किया गया था। असली समस्या तब खड़ी हुई जब अनुच्छेद 352 का प्रयोग किया गया था। जब श्रीमती इंदिरा गांधी के नेतृत्व में केन्द्र सरकार ने 1975 में भाषण की आजादी एवं संगठन पर पाबंदी लगाने की कोशिश की। राष्ट्रीय आपातकाल की उस समय बहुत आलोचना हुई थी। श्रीमती इंदिरा गाँधी ने ऐसा इसलिये किया क्योंकि इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसला श्रीमती इंदिरा गाँधी के विपरीत था। इन परिस्थितियों में जयप्रकाश नारायण ने सेना, पुलिस तथा सरकारी कर्मचारियों को इस आदेश को मानने से मना किया। क्योंकि ये आदेश उनकी राय में गलत था। उन्होंने मुख्य न्यायाधीश पी. एन. राय को भी चुनाव की अपील सुनने से मना किया था। सभी विपक्षी दलों ने लोक संघर्ष समिति का गठन किया, जिसके अध्यक्ष जय प्रकाश नारायण थे। उन्होंने संपूर्ण क्रांति का नारा दिया जिसे जनता का व्यापक समर्थन भी मिला। भारत के संविधान निर्माताओं ने यह इच्छा जताई थी कि आपातकालीन प्रावधान केवल आपातकालीन परिस्थितियों – युद्ध, बाहरी आक्रमण, आंतरिक उथल–पुथल, सैनिक विद्रोह या वित्तीय संकट में ही लागू किये जायेंगे। अनुच्छेद 356 के दुरुपयोग की आशंका के बारे में चेतावनी देते हुए डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने कहा ''कभी इसका प्रयोग न किया जाए, सिवाय अंतिम विकल्प के रूप में जब अन्य सभी विकल्प असफल हो गए हों।'' आपातकालीन प्रावधान स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् 1990 तक केवल राजनीतिक दुर्भावना के लिये दुरुपयोग किये गये थे। हालांकि

21वीं सदी में, इनके दुरुपयोग में कमी आई है। कुछ राजनीतिक दलों द्वारा जो कि केन्द्र सरकार में शासन में थे, इन प्रावधानों का दुरुपयोग किया है। इन दलों द्वारा राज्यों में विपक्षी दलों की सरकारों को हराने के लिये अनुच्छेद 356 का दुरुपयोग किया तथा वहां पर राष्ट्रपति शासन लगाया गया। कई अवसरों पर भारत में, इन प्रावधानों का केन्द्र सरकार द्वारा दुरुपयोग किया गया चाहे कांग्रेस हो या फिर गैर–कांग्रेस दोनों ही द्वारा। सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण है केरल में कम्युनिष्ट पार्टी के नेता ई. एम. एस. नम्बूदीरीपाद की सरकार को केन्द्र ने 1957 में बर्खास्त कर दिया था। यह सबसे पहला उदाहरण था किसी चुनी हुई सरकार को बर्खास्त करने तथा आपातकालीन प्रावधान का उपयोग करने का। 1980 में, इंदिरा गाँधी सरकार ने विभिन्न राज्यों में विपक्षी पार्टियों की सरकारों को बर्खास्त किया था। गैर कांगेसी सरकारों ने भी इस प्रावधान का दुरुपयोग किया है। यहां पर इसके दो प्रमुख उदाहरण हैं। पहला उदाहरण 1977 में जनता पार्टी सरकार का है जब मोरारजी देसाई प्रधानमंत्री थे। दूसरा उदाहरण जनता दल सरकार का जब वी. पी. सिंह प्रधानमंत्री थे। इन दोनों उदाहरणों में कांग्रेसी सरकारों को बर्खास्त किया गया था।

राज्यों में राष्ट्रपति शासन लगाने की प्रायः आलोचना हुई है। प्रायः यह आरोप लगाया जाता है कि केन्द्र सरकार ने अनुच्छेद 356 का दुरुपयोग करके विपक्षी दलों की सरकारों को बर्खास्त किया और राष्ट्रपति शासन लगाया। 1994 के बाद राष्ट्रपति शासन लगाने में कमी आई हैं। ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय ने बोमई केस में अपना फैसला सुनाया था। बोमई फैसले के अनुसार किसी राज्य में राष्ट्रपति शासन लगाने के प्रस्ताव को संसद के दोनों सदनों द्वारा मंजूरी मिलनी चाहिए। इसने धारा 356 के दुरुपयोग को कठिन बना दिया है।

**अभ्यास प्रश्न 2**

**नोटः** i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) आपातकालीन प्रावधानों की मुख्य विशेषताएं क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

## 11.5 सारांश

आपातकाल वह स्थिति है जब लोगों के प्रजातांत्रिक अधिकार निरस्त कर दिये जाते है तथा केन्द्र सरकार राज्य सरकारों की शक्तियाँ अपने पास ले लेती है। आपातकाल की घोषणा का अधिकार राष्ट्रपति के पास हैं। राष्ट्रपति मंत्रीमंडल की सलाह पर आपातकाल की घोषणा कर सकते हैं। आपातकाल तब लगाया जाता है जब युद्ध, बाहरी या आंतरिक उथल–पुथल या वित्तीय संकट उत्पन्न हो गया हो। भारतीय संविधान में आपातकाल के प्रावधानों को भाग 18 में, अनुच्छेद 352–360 के मध्य रखा गया हैं। तीन प्रकार के आपातकाल का प्रावधान है :– राष्ट्रीय, राज्य एवं वित्तीय आपातकाल। अनुच्छेद 352 के अंतर्गत राष्ट्रीय आपातकाल का प्रावधान है और यह तभी लगाया जाता है जब बाहरी आक्रमण या आंतरिक विद्रोह की स्थिति उत्पन्न हो गयी हो। राज्यों के अंदर आपातकाल

अनुच्छेद 360 का संबंध वित्तीय आपातकाल से है। राष्ट्रीय आपातकाल के मामले में राष्ट्रपति मंत्रीमंडल की सलाह पर ही अध्यादेश ला सकते हैं। राष्ट्रपति राज्यों में भी राज्यपालों की रिपोर्ट के आधार पर आपातकाल की घोषणा कर सकते हैं। वित्तीय आपात आर्थिक संकट को दूर करने के लिये लगाया जाता हैं। भारत में राष्ट्रीय आपात तीन बार लगाया गया है। लेकिन अनुच्छेद 356 का प्रयोग कई बार किया जा चुका है। वित्तीय आपात का अभी तक कोई मामला सामने नहीं आया हैं। अनुच्छेद 360 का प्रयोग संपूर्ण भारत में किया जा सकता है सिवाय जम्मू और कश्मीर को छोड़कर। इस प्रावधान का प्रयोग प्रायः राजनीतिक स्वार्थ पूरा करने के लिये भी किया जाता है। भारतीय लोकतंत्र की सफलता के लिये, आपातकाल के प्रावधानों का प्रयोग बहुत सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिये।

## 11.6 उपयोगी संदर्भ

ऑस्टिन, ग्रेनविल (1966), भारतीय संविधान, राष्ट्र की आधार शिला, बंबई, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

बक्षी, पी. एम. (2012), भारत का संविधान, नई दिल्ली, यूनिवर्सल ला प्रकाशन।

बसु, डी. डी., (1960), भारतीय संविधान का निर्माण एवं कार्य प्रणाली, एन. बी. टी. नई दिल्ली, एन.बी.टी.।

चौबे, एस. के. (2000), भारतीय संविधान का परिचय, कलकत्ता, एस. सी. सरकार एंड संस, प्राइवेट लिमिटेड।

कश्यप, सुभाष (2011), हमारा संविधान, नई दिल्ली, एन. बी. टी.।

## 11.7 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

**अभ्यास प्रश्न 1**

1) भारतीय संविधान ने आपातकालीन प्रावधानों को वीमंर संविधान (जर्मनी) तथा भारत सरकार अधिनियम, 1935 से लिया था। संविधान सभा में, इसके पक्ष एवं विपक्ष में राय अलग–अलग बंटी हुई थी।

2) आपातकाल तीन प्रकार है। राष्ट्रीय, राज्य एवं वित्तीय। आपातकाल के दौरान, लोगों के अधिकारों को निरस्त कर दिया जाता है।

**अभ्यास प्रश्न 2**

1) संविधान की मुख्य विशेषताएं हैंः केवल राज्य का अध्यक्ष एक आपातकाल की घोषणा एक अध्यादेश द्वारा कर सकता है। धारा 356 के द्वारा कोषित आपातकाल के अलावा सभी आपातकालों की घोषणा इस बात निर्भर करती है कि राष्ट्रपति इसके लिए संतुष्ट है या नहीं।

# इकाई 12 पाँचवी एवं छठी अनुसूची*

**संरचना**


12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 विशेष प्रावधान क्यों?

12.3 पाँचवी और छठी अनुसूची के अंतर्गत संवैधानिक प्रावधान

12.3.1 पाँचवी अनुसूची

12.3.2 छठी अनुसूची

12.4 पाँचवी और छठी अनुसूची में क्षेत्रों के प्रशासन का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

12.4.1 पाँचवी एवं छठी अनुसूचियों की उत्पत्ति

12.5 पाँचवी और छठी अनुसूचियाँ : एक तुलना

12.6 विशेष प्रावधानों से संबंधित राजनीति

12.6.1 पाँचवी अनुसूची

12.6.2 छठी अनुसूची

12.7 सारांश

12.8 उपयोगी संदर्भ

12.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर


## 12.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप जान सकेंगे :

- देश के अन्य भागों से अलग उन क्षेत्रों को पहचानना जो कि प्रशासनिक रूप से भिन्न हो;
- संविधान की पाँचवी एवं छठी अनुसूचियों के अंतर्गत विशेष प्रावधान जानना;
- इन प्रावधानों को लागू करने के कारण बताना;
- पाँचवी और छठी अनुसूची के अंतर्गत प्रावधानों के अंतर को समझना; और
- इन विशेष प्रावधानों से संबंधित राजनीतिक डायनेमिक को समझना।

## 12.1 प्रस्तावना

भारत का संविधान वैसे तो पूरे देश के लिए समान कानून बनाने की बात करता है, लेकिन कुछ ऐसे क्षेत्र है जहां पर विशेष प्रावधान किये गये है। संविधान निर्माण के समय संविधान निर्माताओं ने यह बात नोट की कि देश में कुछ क्षेत्र एवं कुछ समुदाय ऐसे हैं जो कि पिछड़े हुए है, समाज से अलग है तथा उनका जीवन यापन आदिम या पोराणिक है। इसलिए इनके लिए विशेष ध्यान देने के जरूरत है और उनके हितों को सुरक्षित रखने की जरूरत है। तथा इनके सामाजिक और आर्थिक विकास को आगे बढ़ाने की जरूरत है। संविधान के अनुच्छेद 244 में भाग 10 के अंतर्गत एक विशेष प्रशासनिक व्यवस्था का


*डा. नोंगमेंथेम किशोरचंद सिंह, अकादमिक ऐसोसिएट, राजनीति विज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इग्नू, नई दिल्ली।

प्रावधान है। अनुच्छेद 244 (1) के अनुसार पाँचवी अनुसूची के प्रावधान अनुसचित क्षेत्रों एवं आदिवासी क्षेत्रों में लागू होंगे। इसमे उत्तर–पूर्व के राज्यों में अनुच्छेद लागू नहीं होगा, खासकर असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम। जबकि इन चार राज्यों में अलग से संविधान की छठी सूची लागू करने का प्रावधान है। यह छठी संविधान के अनु. 244 (2) के अंतर्गत है। इस सूची में अलग से ''आदिवासी क्षेत्रों'' को अधिसूचित किया गया है। यह सूची पाँचवी सूची से भिन्न है। इस प्रकार संविधान की पाँचवी और छठी अनुसूची इन विशेष क्षेत्रों के प्रशासन और विशेष अधिकारों से संबंधित है।

## 12.2 विशेष प्रावधान क्यों?

अधिकतर आदिवासी समुदाय के लोग जिन्हें ''अनुसूचित जनजाति'' वर्ग में रखा गया है, वे जंगल एवं पहाड़ी इलाकों में देश के विभिन्न इलाकों में रहते है। इसलिए इन आदिवासी इलाकों में प्रशासन का कार्य करना चिंता का कारण है। जंगल एवं पहाड़ हमेशा एक रूकावट पैदा करते है, तथा जो पहाड़ी आदिवासी लोग हैं वो हमेशा मैदानों में रहने वाले लोगों से अलग रहते है। स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व एवं संविधान लागू होने से पहले ब्रिटिश सरकार की अलगाववादी नीति आदिवासी लोगों के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करने के कारण इन लोगों को वापस जंगल एवं पहाड़ों की तरफ धकेल दिया। इस अलगाव के कारण आदिवासी लोग अशिक्षित, गरीब और पिछड़े बने रहे। वे उन पुरातन वादी कानून और रिवाज को मानते रहे जो कि प्राचीन काल से चला आ रहा है। इनमें से कुछ लोग खेती पर निर्भर है जबकि बाकी लोग अभी भी शिकार करना, भोजन इकट्ठा कर के अपना गुजर बिसर करने पर निर्भर है। इस प्रकार 'भूमि' और जंगल दो ही इन लोगों के जीवन–यापन का मुख्य जरीया या स्रोत है। उन्हें अपनी जमीन और जंगल से बेहद लगाव है। यह उन्हें सम्मान और सामाजिक एवं आर्थिक समृद्धि प्रदान करता है। इसके परिणामस्वरूप, उनका जीवन और दृष्टिकोण देश के अन्य लोगों से खासकर मैदानी इलाकों में रहने वाले लोगों से काफी भिन्न है। इस सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक परिवेश को पहचानने के बाद ही संविधान निर्माताओं ने इनके लिए संविधान में कुछ आवश्यक कदम उठाने को माना। ताकि इनकी पहचान बनी रहे। इन्हें शोषण से बचाया जा सके और इनके लिए विकास को बढ़ावा दे सके। पाँचवी और छठी अनुसूची इनमें से कुछ ऐसे ही उपाय है। इसके अलावा अनुच्छेद 275 (1) में यह प्रावधान भी दिया गया है कि इन दोनों सूचियों के लिए भारत की संचित निधि से फंड दिया जाय ताकि इनके कल्याण के कार्यों को पूरा किया जा सके। इसके परिणामस्वरूप, जब संविधान अपनाया गया तब यह परिकल्पना की गयी कि इससे निचले स्तर पर प्रशासनिक तंत्र को मजबूती मिलेगी आदिवासी इलाकों में विकास कार्य तेजी से होंगे। इसलिए संविधान में पाँचवी और छठी अनुसूची शामिल की गयी ताकि इन लोगों की अपेक्षाओं को पूरा किया जा सके और इन्हें देश की मुख्यधारा में लाया जा सके।

## 12.3 पाँचवी और छठी अनुसूची के अंतर्गत संवैधानिक प्रावधान

### 12.3.1 पाँचवी अनुसूची

संविधान के अनुच्छेद 244 (1) के अंतर्गत पाँचवी अनुसूची के प्रावधान शामिल है। ये प्रावधान उन आदिवासी क्षेत्रों में लागू होंगे जो असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम राज्य से अलग हों। इन विशेष प्रावधानों का मुख्य उद्देश्य है आदिवासी लोगों के हितों की रक्षा करना एवं उनके भूमि, आर्थिक संसाधन एवं आवास की सुरक्षा करना। इसके अलावा इन प्रावधानों का प्रमुख उद्देश्य है उनके रीति–रिवाज, परंपरा को बचाके रखना और अनुसूचित

क्षेत्रों में तीव्र सामाजिक–आर्थिक विकास करना। ये अनुसूचित क्षेत्र वे क्षेत्र है जो पाँचवी अनुसूची के भाग सी में दिये गये है। ये वो क्षेत्र है जिनको राष्ट्रपति 'अनुसूचित क्षेत्र' घोषित करता है।

पाँचवी अनुसूची में जो अनुसूचित क्षेत्र घोषित करने का तरीका अपनाया गया है वह प्रथम अनुसूचित जनजाति आयोग की सिफारिशों पर आधारित है। यह आयोग देबर आयोग के नाम से भी जाना जाता है। इस आयोग की प्रमुख सिफारिशें इस प्रकार थीं :–

i) आदिवासी जनसंख्या की प्रधानता

ii) क्षेत्र की सघनता एवं उसका उचित आकार

iii) क्षेत्र की अविकसित प्रकृति, और

iv) लेगों की आर्थिक स्थिति में असमानता।

ये अनुसूचित क्षेत्र मूल रूप से आदिवासी लोगों के आवासीय क्षेत्र है, जिन्हें हम अनुसूचित जन जाति कहते है। ये आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, बिहार, छत्तीसगढ़, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, झारखंड, महाराष्ट्र, उड़ीसा और राजस्थान जैसे राज्यों में बहुतायत संख्या में पाये जाते है। पाँचवी अनुसूची के भाग 6 (2) में इन क्षेत्रों के परिवर्तन से संबंधित प्रावधान दिये गये है। इसके लिए राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है और वो इस पर अपना आदेश दे सकते हैं। राष्ट्रपति निम्नलिखित आदेश दे सकता है :–

i) किसी भी क्षेत्र को या उसके एक विशेष भाग को अनुसूचित क्षेत्र घोषित करने का आदेश दे सकते है

ii) राज्य सरकार के साथ बातचीत के पश्चात् किसी भी अनुसूचित क्षेत्र के आकार को बढ़ा सकते है,

iii) किसी भी राज्य की सीमा में परिवर्तन कर सकते हैं या किसी भी राज्य को केन्द्र में शामिल कर सकते या नया राज्य बना सकते है।

iv) वे राज्य के राज्यपाल के साथ वार्तालाप करके किसी भी राज्य के क्षेत्र से संबंधित नया आदेश दे सकते है या उनको अनुसूचित क्षेत्रों के रूप में पुनः पारिभाषित कर सकते हैं।

इस तरह राष्ट्रपति को पूर्ण अधिकार दिये गये है कि वह उपयुक्त प्रावधानों के अनुसार किसी भी क्षेत्र को अनुसूचित क्षेत्र घोषित कर सकते हैं या उसके किसी एक भाग को राज्यपाल से बातचीत करके अनुसूचित क्षेत्र घोषित कर सकते है। पाँचवी अनुसूची के प्रावधानों के अंतर्गत राज्यपाल को यह अधिकार दिया है कि वे अनुसचित क्षेत्रों के ऊपर पूरा नियंत्रण रखें तथा प्रशासनिक कार्यों का उचित क्रियान्वयन करें। राज्यपाल को राज्यों के बारे में वार्षिक रिपोर्ट तैयार करके राष्ट्रपति को प्रस्तुत करनी पड़ती है। राष्ट्रपति प्रशासन संबंधित सभी जानकारियाँ राज्यपाल से प्राप्त करते है। राज्यपाल राज्य सरकार को यह निर्देश देता है कि वे अनुसूचित क्षेत्रों में किसी अन्य विषयों को लागू न करें।

पाँचवी अनुसूची में राज्यपालों को विशेष जिम्मेदारी दी गयी है कि वे अनुसूचित क्षेत्रों में शांति एवं सुशासन स्थापित करे। इसके लिए राज्यपाल अनुसूचित क्षेत्रों के लिए कानून बना सकते हैं। राज्यपाल इन क्षेत्रों के लिये निम्न कानून बना सकते हैं।

i) अनुसूचित क्षेत्रों में अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों की भूमि पर पाबंदी लगा सकते हैं या उनकी जमीन पर नियंत्रण लगा सकते है।

ii) अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को जमीन आंवटित करने के लिए नियम लगा सकते हैं।

iii) अनुसूचित जन जाति के लोगों को पैसे उधार देने के लिए साहूकारों के लिए कानून बनाना।

अनुसूचित क्षेत्रों एवं अनुसूचित जन जाति के ऊपर नियंत्रण रखने और प्रशासन के लिए एक अन्य महत्वपूर्ण प्रावधान भी किया गया है वह है आदिवासी सलाह परिषद। पाँचवी अनुसूची के भाग बी के खंड 4 में यह प्रावधान किया गया है कि सभी राज्यों को जहाँ अनुसूचित क्षेत्र है वहां पर इस आदिवासी सलाह परिषद का गठन करना संवैधानिक कर्तव्य है। राष्ट्रपति यह भी निर्देश दे सकता है कि जिन राज्यों में अनुसूचित जन जाति के लोग है लेकिन वह अनुसूचित क्षेत्र नहीं है वहां पर आदिवासी सलाह परिषद का गठन किया जा सकता है। इसमें 20 सदस्यों से अधिक नहीं होने चाहिये एवं उसमें भी तीन चौथाई सदस्य राज्य विधान सभा में अनुसूचित जन जाति के प्रतिनिधि होने चाहिए। जैसाकि पाँचवी अनुसूची के खंड 4 (2) में दिया गया है, आदिवासी सलाह परिषद की प्राथमिक जिम्मेदारी है, राज्य सरकार को अनुसूचित जन जाति के कल्याण से संबंधित मामलों में सलाह देना या अन्य ऐसे मामले जिसे राज्यपाल उचित समझता है।

इसके अलावा अनुच्छेद 399 (1) के अंतर्गत, राष्ट्रपति एक आयोग की नियुक्ति कर सकते हैं जो कि अनुसूचित जन जाति के कल्याण से संबंधित रिपोर्ट दे सकता है। जैसा कि यह अनिवार्य था कि संविधान के लागू होने के बाद दस वर्षों में इस आयोग का गठन करना आवश्यक था इसी कारण से, 1960 में प्रथम अनुसूचित जन जाति आयोग की नियुक्ति की गयी, जिसके अध्यक्ष यू. एन. ढ़ेबर थे। इसका मुख्य कार्य था आदिवासी लोगों की संपूर्ण स्थिति का पता लगाना जिसमें भूमि का मुद्दा एवं अन्य संबंधित मुद्दे शामिल थे। इस आयोग ने 1961 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। इसके बाद 2002 में एक अन्य आयोग का गठन हुआ जिसे दूसरा अनुसूचित जनजाति आयोग कहा जाता है। इसके अध्यक्ष दिलीप सिंह भूरिया थे। बाद में यह भूरिया आयोग के नाम से भी जाना गया। इसका मुख्य कार्य था अनुसूचित जन जाति के कल्याण एवं विकास के संविधानिक उपायों का अवलोकन एवं समीक्षा करना।

इस प्रकार संविधान की पाँचवी अनुसूची के अंतर्गत आदिवासी सलाह परिषद के रूप में एक संस्थागत उपाय किया गया ताकि अनुसूचित क्षेत्रों को प्रशासन ठीक से चलाया जा सके। यह आदिवासी सलाह परिषद उत्तर–पूर्वी राज्यों जैसे असम, मेघालय, मिजोरम एवं त्रिपुरा को छोड़कर बाकी राज्यों में गठित की गयी थी। ये चार राज्य पाँचवी अनुसूची के अंतर्गत नहीं आते है इनके प्रशासन का दायित्व अलग से छठी अनुसूची में किया गया है।

### 12.3.2 छठी अनुसूची

उत्तरी पूर्वी राज्यों के लोगों की अलग रहन–सहन और दृष्टिकोण को देखते हुए संविधान सभा ने इस क्षेत्र में रहने वाले आदिवासी लोगों के लिए अलग प्रशासनिक ढ़ाँचे की आवश्यकता की जरूरत को पहचाना। इसलिए, संविधान के अनुच्छेद 244 (2) में छठी अनुसूची के अंतर्गत विशेष प्रावधान दिये गये है। ये विशेष प्रावधान अनुसचित क्षेत्रों जैसे कि असम, मेघालय, मिजोरम और त्रिपुरा राज्य के प्रशासन के लिए किये गये थे। छठी अनुसूची का प्रमुख प्रावधान था कि आदिवासी क्षेत्रों का प्रशासन पूर्ण रूप से स्वायत्त क्षेत्र होगा और इसमे स्वायत्त जिले होंगे। इस अनुसूची के अंतर्गत राज्यपाल को यह अधिकार दिया गया है कि वे ऐसे क्षेत्रों को निर्धारित करे जो कि स्वायत्त क्षेत्र या स्वायत्त जिले की

इकाई हो। राज्यपाल को यह अधिकार भी दिया गया है कि नये स्वायत्त क्षेत्र या स्वायत्त जिले सृजित कर सके या जो मौजूद स्वायत्त क्षेत्र और स्वायत्त जिले है उनके अधिकार क्षेत्र को बदल सकते है या उनके नाम में परिवर्तन कर सकते है। इन चार राज्यों में स्वायत्त क्षेत्रों या स्वायत्त जिलों का वर्णन दिया गया है जो कि छठी अनुसूची के खंड 20 के अंतर्गत है। इसमें भाग ए और बी दिये गये है। लेकिन वर्तमान में 10 ऐसे स्वायत्त क्षेत्र है जो चार भागों में है वे निम्नलिखित है :–

**भाग I (असम)**

1) उत्तरी–कचार पहाड़ी जिला (दीमा होलांग)
2) काबरी–ऐंगलोंग जिला
3) बोडोलैंड क्षेत्रीय जिला

**भाग II (मेघालय)**

1) खासी पहाड़ी जिला
2) जैन्टिया पहाड़ी जिला
3) गारो पहाड़ी जिला

**भाग III ए (त्रिपुरा)**

त्रिपुरा आदिवासी क्षेत्रीय जिला

**भाग 3 (मिजोरम)**

1) चकमा जिला
2) मारा जिला
3) लाई जिला

छठी अनुसूची के अंतर्गत स्वायत्त जिला परिषद और क्षेत्रीय परिषद बनाने का प्रावधान है। इन परिषदों को कुछ विधायी, कार्यपालिका, न्यायिक एवं वित्तीय अधिकार भी दिये गये है। हांलाकि प्रशासनिक शक्तियाँ और इनके कार्य प्रत्येक राज्य के अलग–अलग हैं। छठी अनुसूची के अंतर्गत जिला परिषद एवं क्षेत्रीय परिषद के विभिन्न प्रशासनिक प्रावधान दिये गये है। ये प्रावधान प्रत्येक राज्य के अलग–अलग है। खंड 12 असम के लिए, खंड 12 ए, मेघालय के लिए, खंड 12 एए त्रिपुरा के लिए एवं खंड 12 बी मिजोरम के लिए है।

छठी अनुसूची के खण्ड 2 (1) के अनुसार, सभी स्वायत्त जिलों में एक जिला परिषद होगी जिसमें 30 सदस्यों से अधिक नहीं होंगे। इन सदस्यों में चार सदस्य राज्यपाल द्वारा नामांकित किये जायेंगे, बाकी सदस्य वयस्क मताधिकार के आधार पर चुनकर जायेंगे। नवीन बोड़ो लैण्ड क्षेत्रीय परिषद एक अलग उदाहरण है क्योंकि इसमें 46 सदस्यों का प्रावधान है। छठी अनुसूची के अंतर्गत इन्हें कार्यपालिका, विधायी, और न्यायिक अधिकार दिये गये हैं ताकि ये अपनी भूमि पर कानून बना सके तथा जंगलों को मैनेज कर सके। इसके अलावा इन्हें परंपरागत मुखिया की नियुक्ति, संपति पर अधिकार, विवाह, सामाजिक रिति रिवाज एवं करों पर भी कानून बनाने का अधिकार दिया गया है। जिला परिषद एवं क्षेत्रीय परिषद के कार्य एवं अधिकार जो छठी अनुसूची में वर्णित है उनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :–

1) **विद्यायी कार्य :**

छठी अनुसूची की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता है कि इसने जिला परिषद को कानून बनाने का अधिकार दिया है। छठी अनुसूची के खण्ड 3 में जिला परिषद एवं क्षेत्रीय परिषद को यह प्रावधान दिया गया है कि वह भूमि, जंगल, नहर या कृषि हेतु जल संसाधन, खेती संबंधी कानून, ग्राम या शहरी समितियाँ, इत्यादि कार्य करने का अधिकार एवं उन पर कानून बनाने का अधिकार दिया गया है। अनुसूची के खण्ड 10 में जिला परिषद को यह अधिकार दिया गया है कि वह व्यापार या उससे संबंधित कोई भी नियम बना सके ताकि अनुसूचित जन जाति के अलावा कोई भी व्यक्ति उस जिले में अपना कारोबार कर सके। हालांकि ये सभी कानून तब तक प्रभावी नहीं होंगे जब तक कि उन पर उस राज्य का राज्यपाल अपनी सहमति न दे।

2) **कार्यपालिका शक्तियाँ**

छठी अनुसूची के अंतर्गत जिला परिषद और क्षेत्रीय परिषद को व्यापक कार्यपालिका शक्तियाँ भी दी गयी है। इन परिषदों को प्राथमिक विद्यालयों का निर्माण करने, डिस्पेंसरी का निर्माण, बाजारों, मवेशियों का तालाब बनाने, रोड़ बनाने, एंव अन्य संबंधित कार्यों को करने की शक्तियाँ दी गयी है। इन परिषदों को प्राथमिक विद्यालय में भाषा निर्धारित करने एंव अनुदेश देने के तरीकों का भी अधिकार दिया गया है।

3) **न्यायिक शक्तियाँ**

जिला परिषद और क्षेत्रीय परिषदों को ग्रामीण एवं जिला न्यायालय बनाने का अधिकार भी दिया गया है। इनके अंदर सभी प्रकार के झगड़ों का निपटारा या विवादों को सुलझाया जाता है। अनुसूचित जनजाति से संबंधित सभी केसों की सुनवायी इन्हीं न्यायालयों में की जाती है। किसी अन्य न्यायालयों को सिवाय उच्च न्यायालय एवं सर्वोच्च न्यायालय के इनके मसलों को सुलझाने का अधिकार नहीं है। लेकिन इन परिषद न्यायालयों को यह अधिकार नहीं दिया है कि वे किसी जुर्म में मृत्युदंड की सजा दे सके या पांच वर्ष से अधिक जेल की सजा सुना सकें।

4) **वित्तीय शक्तियाँ**

छठी अनुसूची जिला परिषद एवं क्षेत्रीय परिषदों को कुछ वित्तीय अधिकार को प्रदान करती है। ये अपनी परिषद का बजट तैयार करने का अधिकार रखती है। छठी अनुसूची के खण्ड 8 में इन परिषदों को भूमि कर एंव राजस्व को एकत्र करने एवं आयकरदान करने का अधिकार दिया गया है। एवं ये व्यापारियों, मवेशियों, वाहनों, एवं व्यवसायों पर कर लगा सकती है। ये परिषदें माल का बाजार में प्रवेश पर भी कर लगा सकती है, विद्यालयों के रखरखाव, अस्पतालों के रखरखाव, एवं सड़कों के रखरखाव पर भी कर लगा सकती है। इस अनुसूची के खण्ड 9 के अंतर्गत परिषदों को यह अधिकार भी दिया गया है कि वे खदानों की खुदाई के लाइसेंस दे सके।

**अभ्यास प्रश्न 1**

**नोट :** 1) अपने उत्तर के लिये निम्न रिक्त स्थान का प्रयोग करें

2) इस इकाई के अंत में दिये गये उत्तर से अपने उत्तर की जाँच करें।

1) उत्तर–पूर्व भारत के लिए बनाये गये विशेष प्रावधानों का विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

## 12.4 पाँचवी और छठी अनुसूची में दिये गये प्रशासन का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भारत में आदिवासी लोगों के लिए अलग प्रशासन जिसका आधार परम्परागत व्यवस्था एवं सामुदायिक स्वशासन है उसका इतिहास बहुत पुराना है। यहां तक कि संविधान के लागू होने से पूर्व भी आदिवासी इलाकों में रहने वाले लोगों के खिलाफ हो रहे शोषण एवं अत्याचार पर ब्रिटिश सरकार के काल में भी उन्हें सुरक्षा देने की जरूरत महसूस की भूमि, जंगल, विवाद, जैसे मसलों को प्रचालित कानून के अनुसार सुलझाया जाता था जिस पर आदिवासी मुखिया का फैसला ही अंतिम होता था। ब्रिटिश औपनिवेशक शासन ने कई प्रकार के कानून एवं नियम लागू किये इनमें से कुछ कानून इस प्रकार है :– आंतरिक रेखा नियम, 1873, अनुसूचित जिला अधिनियम 1874, भारत सरकार अधिनियम 1919, एवं 1935 इत्यादि। अनुसूचित जिला अधिनियम 1874 ने सामान्य कानूनों एवं अधिनियमों को जिले में प्रतिबंधित किया । भारत सरकार अधिनियम 1919 ने इन क्षेत्रों को ''पिछड़ा क्षेत्र'' रूपांकित किया लेकिन बाद में 1935 में अधिनियम के अंतर्गत इन्हें 'बहिष्कृत' एवं 'आंशिक बहिष्कृत' क्षेत्र में बदला गया।

उत्तर–पूर्वी भारत के पहाड़ी इलाकों का इतिहास भारत के अन्य भाग से अलग है। इस क्षेत्र में शासन अन्य क्षेत्रों से काफी भिन्न है। भारत के सभी देशी राज्यों का शासन औपनिवेशिक प्रशासन के मामलों पर आधारित था। जबकि असम के पहाड़ी इलाकों को अप्रत्यक्ष रूप से ब्रिटिश शासन करते थे। आदिवासी क्षेत्रों के लागू होने के बाद उत्तर–पूर्व भारत में ब्रिटिश शासन ने प्रशासन की एक विशेषीकृंत प्रणाली को अपनाया। इसका मुख्य मकसद था आदिवासी समाजों के प्रशासनिक हस्तक्षेप को कम करना। भारत सरकार अधिनियम 1935, ने असम के पहाड़ी इलाकों को बाहर रखा गया। क्योंकि इस विस्तृत पहाड़ी क्षेत्रों को प्रशासित करना ब्रिटिश शासन के लिए काफी मुश्किल था, इसलिए इस पहाड़ी इलाके को परम्परागत कानून एवं रिति–रिवाजों द्वारा प्रशासित किया गया, इसमें ज्यादा खर्चा भी नहीं हुआ। इस इलाके मे लोग नहीं चाहते थे कि उन्हें कोई बाहरी शासन करे।

### 12.4.1 पाँचवी और छठी अनुसूची की उत्पत्ति

लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत के नीति–निर्माताओं ने इस ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति को बदलने का निर्णय लिया। क्योंकि ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति आदिवासी लोगों के कार्यों में हस्तक्षेप एवं अलगाववादी थी। इसलिए हमारे नीति निर्माताओं ने विकास एवं एकीकरण की नीति को अपनाया। विभिन्न जातिगत समूहों की विशेष जरूरतों को ध्यान में रखकर संविधान निर्माताओं ने विभिन्न प्रशासनिक उपाय करने का प्रावधान किया ताकि इनके रीति–रिवाज, परंपरा, संस्कृति, धार्मिक क्रिया–कलाप एवं भाषा इत्यादि का संरक्षण

किया जा सके। इसलिए संविधान सभा ने 1946 में एक सलाहकार समिति का गठन किया । यह समिति मौलिक अधिकारों, अल्पसंख्यकों और आदिवासी लोगों के लिए बनाई गयी थी तथा इसके अध्यक्ष सरदार बल्लभ भाई पटेल थे। इस समिति का मुख्य उद्देश्य था संविधान सभा को आदिवासी एवं बहिष्कृत क्षेत्रों के प्रशासन के लिए कुछ उचित योजना को बनाने की सलाह देना। इस सलाहकार समिति ने अपनी बैठक में 27 फरवरी 1947 को दो अन्य उप–समितियाँ को गठित करने का निर्णय लिया। इन दो उप–समितियों का नाम था (1) बहिष्कृत और आंशिक रूप से बहिष्कृत क्षेत्रीय उप– समिति (असम को छोड़कर) इसके अध्यक्ष ए. वी. ठक्कर थे तथा (2) उत्तर–पूर्व फ्रंरियर आदिवासी एवं बहिष्कृत क्षेत्रीय उप– समिति, इसके अध्यक्ष बोरदोलोई थे। इन समितियों का प्रमुख उद्देश्य था आदिवासी लोगों के मामलों पर गौर करें। इन दोनों उप–समितियों की सिफारिशों के आधार पर आदिवासी लोगों के स्थान को (असम के अलावा) अनुसूचित क्षेत्र घोषित किया गया। जबकि असम के आदिवासी लोगों के क्षेत्र को ''आदिवासी क्षेत्र'' घोषित किया गया। आदिवासी लोगों की मांग और सावधानीपूर्वक अध्ययन करने के पश्चात् इन उप–समितियों ने यह महसूस किया कि इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की रक्षा एवं उनके हितों का संरक्षण करना अनिवार्य है ताकि ये अपनी आदिवासी पहचान को बचा सके एवं राजनीतिक जीवन में भी भागीदारी निभा सके।

उत्तर–पूर्व फ्रंटियर आदिवासी उप– समिति जो कि बोरदोलोई उप– समिति के नाम से भी जानी जाती है जिसके अध्यक्ष गोपीनाथ बोरदोलोई थे और वो अविभाजित असम के प्रधानमंत्री भी थे, उन्होंने असम के आदिवासी क्षेत्रों का भ्रमण किया तथा वहां के लोगों के साथ बातचीत की और उनके प्रतिनिधियों से भी बातचीत की। इस भ्रमण का उद्देश्य था लोगों की तकलीफों का जानना तथा आदिवासी लोगों की भावनाओं को पहचानना तथा इस क्षेत्र के पिछड़ेपन के कारणों का पता लगाना। इस बोरदोलोई उप– समिति ने यह पाया कि इस आदिवासी इलाके के लोगों की अपनी एक स्व–शासन की प्रणाली है जो कि लोकतांत्रिक तरीके से कार्य कर रही है एवं जो भी विवाद एवं मसले है उनका निपटारा अपने रिति–रिवाज एवं परंपरा के अनुसार से सुलझाये जाते हैं। वे अपनी भूमि, जंगल, जीवन चर्चा, और न्याय की परंपरावादी व्यवस्था के प्रति बहुत ही संवेदनशील थे। बोरदोलोई उप समिति ने यह अवलोकन किया कि इन ''बहिष्कृत'' क्षेत्रों में कुछ छोटे आदिवासी लोग है जिनकी अलग संस्कृति है, परंपरा है एवं अलग भाषा है, तथा उन्हें विशेष ध्यान देने की जरूरत है ताकि उनकी सांस्कृतिक पहचान एवं जातीय पहचान को ताकतवर आदिवासी समुदाय से बचाया जा सके। इस प्रकार, उपर्युक्त दो उप–समितीयों की सिफारिशों के आधार पर संविधान की प्रारूप समिति ने संविधान में पाँचवी एवं छठी अनुसूची के प्रावधान को शामिल किया फरवरी 1948 में, तथा बाद में 26 जनवरी 1950 को संविधान लागू होते समय इसमें विशेष प्रावधानों के अंतर्गत इन दोनों अनुसूचियों को शामिल किया।

### अभ्यास प्रश्न 2

**नोटः** i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) उत्तर–पूर्व भारत के पहाड़ी इलाकों के लिये विशेष प्रावधान लागू करने के मुख्य कारण क्या थे?

.....

.....

## 12.5 पाँचवी और छठी अनुसूची : एक तुलना

यद्यपि पाँचवी और छठी अनुसूची के अंतर्गत दोनों क्षेत्र जो आदिवासी लोगों का निवास स्थान है इन्हें अनुसूचित जनजाति से वर्गीकृत किया गया है, संविधान इन्हें अन्य रूप से वर्गीकृत करना है, जैसे पाँचवी अनुसूची के अंतर्गत अनुसूचित क्षेत्र तथा छठी अनुसूची के अंतर्गत आदिवासी क्षेत्र। पाँचवी अनुसूची में जहां आदिवासी सलाह परिषद का प्रावधान है वहीं छठी अनुसूची में स्वायत्त जिला परिषद या क्षेत्रीय परिषद का प्रावधान दिया गया है। ये अपने निर्धारित क्षेत्रों में प्रशासनिक कार्यों का संस्थागत उपाय है। पाँचवी अनुसूची के अंतर्गत आदिवासी सलाह परिषद राज्य की विधान सभा द्वारा बनाई जाती है जबकि जिला परिषद या क्षेत्रीय परिषद छठी अनुसूची के अंतर्गत संविधान की उपज है और इन्हें संविधान द्वारा ही कार्य एवं शक्तियां प्राप्त है।

छठी अनुसूची के अंतर्गत जिला परिषद को संविधान द्वारा कार्यपालिका विधायी एवं न्यायिक शक्तियां प्राप्त है। जबकि पाँचवी अनुसूची के अंतर्गत आदिवासी सलाह परिषद को सीमित शक्तियां प्राप्त है क्योंकि इसका गठन विधान सभा द्वारा किया गया है। केवल इन्हें कार्यपालिका शक्तियां ही मिली हुई है। छठी अनुसूची की तरह विधायी, न्यायिक एवं वित्तीय शक्तियां पाँचवी अनुसूची के क्षेत्रों को देने का प्रावधान नहीं है। कार्यपालिका शक्तियां भी रज्य अनुसूचित क्षेत्रों को प्रदान करता है।

वित्तीय मामलों में भी, छठी अनुसूची जिला और क्षेत्रीय परिषदों को संसाधन जुटाने को अधिकृत करती है। वे अपने अधिकार क्षेत्र में कर एवं राजस्व एकत्र करने का अधिकार रखती है। जबकि पाँचवी अनुसूची के अंतर्गत आदिवासी सलाह परिषदों को वित्तीय शक्तियां नहीं प्रदान की गयी है। ये अपना बजट भी स्वयं तैयार नहीं कर सकती है। पाँचवी अनुसूची के प्रावधानों में आय के स्रोतों या सहायक अनुदानों का कहीं कोई जिक्र नहीं है । फिर भी, क्योंकि जिला परिषद या आदिवासी सलाह परिषद राज्य सरकार द्वारा निर्मित है इसलिए राज्य सरकार का यह नैतिक कर्तव्य है कि उन्हें वित्तीय सहायता दी जाये।

छठी सूची शक्तियों के प्रदान करने के लिए जिला और क्षेत्रीय परिषदों को एक लंबी सूची प्रदान करता है जिसमें ऐसे विषय है जिन पर ये परिषदें अपनी शक्तियों का इस्तेमाल कर सकती है। जबकि पाँचवी सूची के अंतर्गत आदिवासी सलाह परिषदों को नाम मात्र की शक्तियां प्रदान की गयी है जो कि राज्य मंत्रीमंडल द्वारा उस पर निर्णय लिया जाता है। इसलिये छठी अनुसूची के अंतर्गत स्थापित स्वायत्त जिला परिषदों को पाँचवी सूची के अंतर्गत दी गयी आदिवासी सलाह परिषदों की तुलना में ज्यादा शक्तियां प्राप्त है। वास्तव में, छठी सूची को कभी–कभी लघु संविधान की तरह भी देखा जाता है जबकि जिला एवं क्षेत्रीय परिषदों को लघु–राज्य या राज्य के अंदर राज्य क्योंकि इन्हें बहुत अधिक विधायी, कार्यपालिका, वित्तीय एवं न्यायिक शक्तियां मिली हुई है।

## 12.6 पाँचवी और छठी सूची से संबंधित राजनीति

विशेष प्रावधानों के बावजूद देश के सभी क्षेत्रों में इनके औचित्य एवं इनकी दक्षता पर असंतोष है जहां पर ये प्रावधान मौजूद है। कुछ लोग इन प्रावधानों का विरोध इसलिए करते है क्योंकि ये अपर्याप्त है जबकि कुछ इन्हें अनावश्यक मानकर विरोध करते है।

### 12.6.1 पाँचवी अनुसूची

जैसा कि हम पहले ही चर्चा कर चुके हैं पाँचवी अनुसूची उत्तर–पूर्व भारत के क्षेत्रों को छोड़कर शेष सभी राज्यों के आदिवासी क्षेत्रों पर लागू होती है। लेकिन आम धारणा य है कि पाँचवी अनुसूची अपने मकसद को पूरा करने में असफल रही है। वास्तव में पाँचवी अनुसूची के प्रावधानों को कभी भी पूरी तरह से लागू नहीं किया गया जितना उन्हें किया जाना चाहिये था। राज्य सरकार की तरफ से इसमें पूरी कमी दिखाई दे रही है क्योंकि राज्य सरकार ने कभी भी आदिवासी क्षेत्रों के विकास के लिए कोई ठोस योजना नहीं बनाई। ज्यादातर राज्यों में आदिवासी सलाह परिषद के सदस्य यह आरोप लगाते है कि राज्य सरकार उनकी सलाह एवं सुझानों को नहीं मानती जो कि आदिवासी लोगों के हितों के लिए महत्वपूर्ण होती है। उन्हें आदिवासी लोगों के मामलों में अपने विचार प्रस्तुत करने का बहुत कम अवसर मिलता है। इस प्रकार उनकी यह अनुपस्थिति उनकी लोकतांत्रिक अधिकारों से उन्हें वंचित करती है। क्योंकि यह उनका संविधान अधिकार है कि वे विकास की प्रक्रिया में और निर्णय–निर्माण प्रक्रिया में पूरी तरह से भागीदारी निभाये। ऐसी स्थिति में, अल्पसंख्यक आदिवासी लोगों की आवाज नीतियों के क्रियान्वयन में कहीं भी दिखाई नहीं देती।

दूसरी तरफ, यह भी देखने को मिला है कि स्थानीय स्तर पर नीतियों के क्रियान्वयन में बहुत कमियां मिली है। संविधान में दिये गये विभिन्न प्रावधानों के बावजूद, राज्यपाल की भूमिका भी बहुत नगण्य रही है। यद्यपि राज्यपाल राज्य का संविधानिक मुखिया होता है, जो केन्द्रिय सरकार द्वारा नियुक्त किया जाता है, संविधान के अनुच्छेद 163 के अंतर्गत, राज्यपाल राज्य के मंत्रिमंडल की सलाह पर कार्य करने को बाध्य होता है। ऐसी व्यवस्था के अंतर्गत राज्यपाल पाँचवी अनुसूची के अंतर्गत कोई खास भूमिका नहीं निभा सकता। यदि वह ऐसा करता है तो उसे राज्य के मंत्रिमंडल की सलाह लेना अनिवार्य है। अन्य शब्दों में राज्यपाल कैबिनेट के फैसलों को मानने को बाध्य है तथा चुनी हुई सरकार की नीतियों को लागू करना उनका दायित्व है। वैधानिक समर्थन की कमी की वजह से आदिवासी सलाह परिषद की कार्यप्रणाली राजनीतिक दलों पर निर्भर करती है या फिर जो दल राज्य के प्रशासन को चलाता है उसके ऊपर निर्भर करती है।

### 12.6.2 छठी अनुसूची

छठी अनुसूची की भी अपनी कुछ सीमाऐं है। इस सूची के अंतर्गत गठित स्वायत्त जिला परिषदों ने परंपरागत ढ़ाँचे को कमजोर किया है जिसका मुखिया आदिवासी समाज से होता था। जिला परिषदें वर्तमान में आधुनिक संगठन है जिसका नेतृत्व नई पीढ़ी के हाथों में है जो बहुत छोटा विशिष्ठ वर्ग है। इस प्रकार इन जिला परिषदों एवं क्षेत्रीय परिषदों के विरूद्व आदिवासी समाज के लोगों ने ही विरोध किया। खासकर मुखिया की तरफ से इसका भारी विरोध हुआ। पहाड़ी आदिवासी, करबी ऐंग्लौंग और उत्तरी कचार पहाड़ी आदिवासी छठी अनुसूची से पूरी तरह संतुष्ट नहीं थे। परपंरागत मुखिया विशेषकर लुसाई और खासी पहाड़ी आदिवासियों ने इसका विरोध किया क्योंकि उन्होंने यह महसूस किया कि इससे उन्हें उनके अधिकारों से वंचित रेखा जायेगा जो उन्हें परंपरागत आदिवासी प्रशासनिक व्यवस्था से मिले हैं।

फिर से कुछ आदिवासी समूहों को विशेष प्रावधान देने से अन्य समूहों ने भी अपनी मांग उठाने की कोशिश की। इसने इस क्षेत्र में रहने वाले लोगों के बीच असमानता पैदा की तथा इससे विभिन्न समूहों के बीच विवाद भी बढ़ा, आदिवासी बनाम आदिवासी तथा

आदिवासी बनाम गैर आदिवासी। प्रारंभ में केवल दो असम के पहाड़ी जिलों को छठी अनुसूची में शामिल किये गये थे, वे थे एक कर्बी ऐंगलोंग तथा दूसरा उत्तरी कचार पहाड़ी जिला। लेकिन बाद में बोडोलैण्ड क्षेत्रीय जिला को छठी अनुसूची के अंतर्गत लाया गया संविधान (उन्नीसवां संशोधन अधिनियम, 2003) में, तो बाद में असम के मैदानी इलाकों के आदिवासियों जैसे मिसिंग, लिड (तिवा) और राभास ने स्वायत्ता की मांग को बढ़ावा दिया। छठी अनुसूची के अंतर्गत बोडो को शामिल करने के बाद इन समुदायों में भारी असंतोष पैदा हुआ क्योंकि राज्य सरकार ने उन्हें पहले से ही स्वायत्त परिषद का दर्जा दे दिया था।

इसी तरह मणिपुर के पहाड़ी आदिवासी भी छठी अनुसूची में शामिल होने की मांग कर रहे है हालांकि उन्हें मणिपुर जिला परिषद अधिनियम 1971 के अंतर्गत विशेष प्रशासनिक प्रावधान दिये गये हैं। इससे विभिन्न समुदायों के बीच जातीय विभाजन पैदा हो गया था जिसने हिंसात्मक रूप धारण कर लिया। इस दौरान, अनेक आदिवासी समूहों और जिला परिषदों ने भी स्वायत्ता की मांग की एवं केन्द्र सरकार से सीधे फंड (धन) की मांग की ताकि उनके कार्य एवं शक्तियों को मजबूत बनाया जाये। ये समूह अपनी मांगों को पूरा करने के लिए कभी कभी हिंसात्मक आंदोलन भी करते हैं।

दूसरी ओर जिला एवं क्षेत्रीय परिषदों की कार्यप्रणाली के विरूद्व कई प्रकार की आलोचना देखने को मिली है। कुछ लोग यह आरोप लगाते है कि ये परिषदें कुछ निहित स्वार्थों को पूरा करती है तथा कुछ लोग इनमें भ्रष्टाचार और धन के दुरूपयोग का भी आरोप लगाते हैं। इसलिये ज्यादातर लोग विशेषकर, गैर आदिवासी इन परिषदों की प्रासंगिकता पर भी समय समय पर सवाल उठाते रहते है, तथा वे इन विशेष प्रावधानों को हटाना चाहते हैं।

## 12.7 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपको यह पता चल गया होगा कि भारत में कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जिन्हें संविधान की पाँचवी और छठी अनुसूची के अंतर्गत विशेष प्रावधान दिये गये है। ये क्षेत्र मुख्य रूप से उत्तर–पूर्वी भारत के पहाड़ी इलाके हैं तथा ये आदिवासी लोगों का अनुसूचित क्षेत्र माना जाता है। ये इलाके असम, मेघालय, मिजोरम एवं त्रिपुरा से अलग है। पाँचवी एवं छठी अनुसूची ने इन क्षेत्रों को विशेष प्रावधान दिये हैं ताकि अपना प्रशासन चला सके। ये विशेष प्रावधान उनकी सांस्कृतिक पहचान एवं अधिकारों को सुरक्षित रखने के लिये दिये गये है। विशेषकर बाहरी लोगों के अतिक्रमण को रोकने के लिए दिये गये हैं। पाँचवी अनुसूची में उन आदिवासी क्षेत्रों को शामिल किया गया है अनुसूचित क्षेत्र कहा गया है। तथा उन्हें संरक्षण प्रदान किया गया है, जबकि छठी अनुसूची असम, मेघालय, मिजोरम एवं त्रिपुरा के आदिवासी क्षेत्रों के लिये बनी है। यह अनुसूची इन क्षेत्रों को विधायी, प्रशासनिक, न्यायिक एवं वित्तीय शक्तियां प्रदान करती है। इस अनुसूची ने इन्हें स्वायत्ता जिला परिषद एवं क्षेत्रीय परिषद बनाने का भी प्रावधान दिया गया है। इस प्रकार जैसा कि हम चर्चा कर चुके है कई प्रकार की खामियों के बावजूद ये दोनों अनुसूचियों आदिवासी लोगों को संविधानिक संरक्षण प्रदान करती है।

## 12.8 उपयोगी संदर्भ

1) बसु डी. डी., (1985), भारत का संविधान, नई दिल्ली।

2) बक्शी, पी. एम., (1999), भारत का संविधान, दिल्ली, यूनिवर्सल ला पब्लिरिंग।

3) चौबे, एस. के., (1994), उत्तर–पूर्व भारत में हिल्स पालिटिक्स् ओरियंट लांगमैन नई दिल्ली।

4) भारत सरकार, (2004), एस. सी एण्ड टी रिपोर्ट, नई दिल्ली

5) भारत सरकार, (1971), ढ़ेबर समिती रिपोर्ट, नई दिल्ली

6) गृह मंत्रालय, भारत सरकार, (1961), अनुसूचित जन जाति आयोग रिपोर्ट, नई दिल्ली

7) भारत सरकार अधिनियम, (1935)

## 12.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

**अभ्यास प्रश्न 1**

1) पाँचवी अनुसूची : आदिवासी सलाहकार समिति (परिषद)

2) छठी अनुसूची : स्वायत्त जिला परिषदें और क्षेत्रीय परिषदें

**अभ्यास प्रश्न–2**

अपनी सांस्कृतिक, सामाजिक एवं ऐतिहासिक पहचान को बनाये रखना तथा अपने राजनीतिक एवं आर्थिक हितों की रक्षा करना।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

# इकाई 13 स्थानीय स्व-शासन*

**संरचना**


13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 भारत में ग्रामीण स्व-शासन का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

13.3 स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत में पंचायती राज (1950–1992)

13.4 73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992

13.4.1 पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम), 1996

13.5 73 वें संविधान संशोधन के बाद के काल में पंचायती राज संस्थाऐं : उत्तर प्रदेश के संदर्भ में

13.5.1 ग्राम पंचायत

13.5.2 क्षेत्र पंचायत

13.5.3 जिला पंचायत (जिला परिषद)

13.5.4 पंचायती राज संस्थाऐं और जिला ग्रामीण विकास अभिकरणों के बीच संबंध

13.5.5 पंचायती राज संस्थाऐं : आकलन (मूल्यांकन)

13.6 शहरी स्थानीय स्व–शासन

13.6.1 74वें संविधान संशोधन के उपरांत (1992) शहरी स्थानीय स्व–शासन निकाय

13.7 नगर निगम वित्त

13.7.1 कर राजस्व

13.7.2 चुंगी कर (स्थानीय कर)

13.7.3 गैर–कर राजस्व

13.7.4 सहायक अनुदान

13.7.5 उधार और ऋण (कर्जा)

13.7.6 माल सेवा कर (जी.एस.टी.)

13.8 सारांश

13.9 उपयोगी संदर्भ

13.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर


## 13.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप यह जान सकेंगे :

- भारत में स्थानीय स्व-शासन की उत्पत्ति;
- भारत में ग्रामीण एवं शहरी इलाकों में स्थानीय स्व–शासन का ढ़ाँचा एवं कार्यप्रणाली;
- स्थानीय स्व-शासन की शक्तियों एवं क्षेत्र में परिवर्तन; और
- स्थानीय स्व-शासन का केन्द्र और राज्य सरकारों के साथ सम्बन्ध।


*डा. विनायक नारायण श्रीवास्तव, पूर्व फेलो, नेहरु स्मारक एवं पुस्तकालय, नई दिल्ली, और डा. गुरूपदा सरन, स्कूल ऑफ कन्टीन्यूइंग ऐडूकेशन, इग्नू, नई दिल्ली, बी.पी.एस.ई–212, इकाई18 से अनुकूलित

## 13.1 प्रस्तावना

भारत में राजनीतिक सत्ता को तीन भागों में विभाजित किया गया है– केन्द्र सरकार, राज्य सरकार और स्थानीय सरकार। स्थानीय स्व–शासन के अंतर्गत ग्रामीण क्षेत्र अर्थात् गाँवों में पंचायती राज संस्थाऐं है जबकि शहरों में नगर पालिका या नगर परिषद है। ये सब स्थानीय स्व–शासन की संस्थाओं के रूप में जानी जाती है। 73वें और 74वें संविधान संशोधन ने स्थानीय स्व–शासन के क्षेत्र का विस्तार किया है।

## 13.2 भारत में ग्रामीण स्व–शासन का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

पंचायती राज व्यवस्था का हमारा देश में काफी लंबा इतिहास रहा है। प्राचीन काल में ग्रामीण समुदाय में अपने कार्यों को पूरा करने के लिए इन संस्थाओं का गठन किया गया। मुगल काल में ग्राम स्वायत्ता काफी महत्वपूर्ण थी, इसलिए इस काल में स्थानीय समुदाय पर मुगल काल का प्रभाव काफी कम था। लेकिन औपचारिक तौर पर स्थानीय निकायों का ढ़ाँचा 1882 में रिपन प्रस्ताव के अनुसार लागू किया गया। इसका प्रमुख उद्देश्य था औपनिवेशिक प्रशासन को भारतीय विशिष्ट वर्ग का संस्थानिक समर्थन प्रदान करना। भारत में समकालीन स्थानीय स्व–शासन ब्रिटिश सरकार द्वारा लागू की गयी प्रणाली को ही जारी रखने की व्यवस्था है ना कि ब्रिटिश–पूर्व काल की व्यवस्था का। कई प्रकार के प्रांतीय अधिनियम स्थानीय निकायों के लिए पारित किये गये और इसके द्वारा अन्य प्रांतीय और केन्द्रिय कानूनों की रूपरेखा प्रस्तुत की। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय स्व–शासन जिसे ग्राम पंचायत कहा जाता है, 1907 में रोयल आयोग की सिफारिशों के पश्चात् गाँवों में स्थापित किया गया। इसका प्रमुख लक्ष्य था सत्ता का विकेन्द्रिकरण करना ताकि जनता ग्राम पंचायतों के साथ अपने आप को स्थानीय प्रशासन के साथ जोड़ सके। पंचायतों को स्थानीय मंडल के अधीन नहीं रखा जाता था बल्कि उप–आयोग के अधीन रखा जाता था। ग्राम पंचायतों को कुछ न्यायिक और प्रशासनिक शक्तियाँ प्राप्त थी। इन्हें कुछ भूमि उपकर (land cesses) एवं विशेष अनुदान प्राप्त करने का भी अधिकार था।

1925 में ग्रामीण स्थानीय स्वशासन बिल लाया गया जिसने नौ सदस्यीय ग्राम सत्ता के चुनाव का प्रावधान किया। सफल ग्राम सत्ता को और अधिक शक्तियां दी गयी। अब पंचायतों को एक से अधिक गाँव शामिल करने का अधिकार था। पंचायतों को कुछ महत्वपूर्ण काय करने जैसे जलापूर्ति, मेडिकल राहत और साफ–सफाई का अधिकार था। जहां कोई भी ग्राम संगठन मौजूद नहीं था वहां एक सदस्यीय ग्राम सत्ता को उसके स्थान पर महत्व दिया गया।

## 13.3 स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में पंचायती राज (1950-1992)

स्वतंत्रता के प्रारंभिक वर्षों में सरकार ने कई योजनाऐं शुरू की। इसमें ग्राम समाज के विकास के लिये सामुदायिक विकास कार्यक्रम और राष्ट्रीय विस्तृत सेवा कार्यक्रम प्रमुख थे। इन कार्यक्रमों से बड़े स्तर पर सरकारी अफसरों का सृजन हुआ जैसे खण्ड विकास अधिकारी (बी.डी.ओ.) और ग्राम स्तरीय कर्मचारी (वी.एल.डब्ल्यू) लेकिन इन सामुदायिक विकास कार्यक्रमों का परिणाम संतोषजनक नहीं था।

पंचायती राज संस्थाओं के गठन का प्रथम प्रयास 1957 में किया गया। उस समय योजना आयोग ने योजना प्रोजेक्ट पर एक समिति गठित की। इस समिति का नाम था मेहता समिति, जिसके अध्यक्ष बलवंत राय जी. मेहता थे। मेहता समिति का प्रमुख उद्देश्य थाः–

1) सामुदायिक विकास कार्यक्रमों एवं राष्ट्रीय विस्तार सेवा के ठीक प्रकार से क्रियान्वयन के लिये एक रिपोर्ट देना। इसमें ग्राम पंचायत और उच्च स्तरीय संगठनों का संभावित संबंध भी हो।

2) जिला प्रशासन के पुनर्गठन के चरणों को निर्धारित करना। इससे सामान्य प्रशासन और जिले का संपूर्ण विकास करने में सहायता मिलेगी एवं जनतांत्रिक निकायों को इसके ऊपर नियंत्रण भी रखना आसान होगा।

बलवंत राय मेहता समिति ने राष्ट्रीय स्तर पर सर्वेक्षण किया तथा यह पाया कि सामुदायिक विकास कार्यक्रम एवं राष्ट्रीय सेवा विस्तार कार्यक्रमों में जनता की भागीदारी नहीं है। ये पूरी तरह कार्य करने में असमर्थ थी। इनका कार्य भी तदर्थ सेवा की तरह था। इस कमी को दूर करने के लिए, बलबंत राय मेहता समिति ने गाँवों में लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्थापना की सिफारिश की। ये लोकतांत्रिक संस्थाऐं ग्राम पंचायत के रूप में जानी जाती है। बलवंत राय मेहता समिति ने यह भी सिफारिश की कि ग्राम पंचायतों को पर्याप्त शक्ति और वित्तीय संसाधन प्रदान किया जाना चाहिए। लेकिन, ग्राम पंचायतों को राज्य के एजेन्ट के रूप में माना गया, खासकर विकास योजनाओं को लागू करने में। बलवंत राय मेहता समिति ने स्थानीय विकास के लिये राज्य प्रायोजित योजनाओं की जरूरतों पर अधिक बल दिया। इसने सुझाव दिया कि स्थानीय निकायों का कार्य कृषि विकास की तरफ अधिक होना चाहिये, स्थानीय उद्योगों एवं पशुपालन में सुधार करना, कल्याणकारी कार्य, प्राथमिक विद्यालयों का संचालन इत्यादि कार्य भी इसके अंतर्गत ही होने चाहिए। इसने राज्य की स्वायत्ता का भी समर्थन किया जो कि पूरी तरह से सरकार के नियंत्रण में थी।

बलवंत राय मेहता समिति ने ''लोकतांत्रिक विकेन्द्रिकरण'' के उपायों की सिफारिश की ताकि सामुदायिक विकास कार्यक्रमों की कमियों को दूर किया जा सके। इसने यह सुझाव दिया कि विकास से संबंधित अधिकार पंचायत समिति के पास होना चाहिए जो कि माध्यमिक स्तर पर है। मेहता रिपोर्ट में पंचायत समिति और ग्राम पंचायत के बीच कार्य को करने के लिए ग्राम सेवकों की नियुक्ति की गयी। मेहता समिति की रिपोर्ट के आधार पर ही पंचायती राज संस्थाओं को पूरे देश में विस्तार किया गया। मेहता समिति की सिफारिशें मानने के बाद पहली ग्राम पंचायत का चुनाव भारत में 1957 में राजस्थान के नागौर जिले में हुआ। लेकिन बाद में पंचायती राज संस्थाओं में भी गुटबाजी, लड़ाई–झगड़ा और भ्रष्टाचार की शिकायतें आने लगी। पंचायती राज संस्थाओं के चुनाव काफी लंबे समय तक नहीं करवाया गया तथा 1970 तक पंचायती राज संस्थाओं की निष्फलता शीर्ष पर पहुँच गयी थी।

इस प्रकार पंचायती राज संस्थाओं के कार्यों की समीक्ष करने की जरूरत महसूस हुई जो भारत में बलवंतराय मेहता समिति के अनुसार स्थापित हुई थी। इसके लिए केन्द्र सरकार ने जो कि जनता पार्टी की सरकार थी 1978 में अशोक मेहता समिति को नियुक्त किया। इस समिति को बनाने का मुख्य उद्देश्य था पंचायती राज संस्थाओं की कार्यप्रणाली का मूल्यांकन करना तथा उनके सुधार के लिए कुछ उपायों की सिफारिश करना। लेकिन अशोक मेहता समिति ने विकास के बजाय वितरण तकनीक पर ज्यादा जोर दिया। इसने कुछ नये सुझाव भी दिये जैसे कि राजनीतिक दलों को चुनाव लड़ने की आज्ञा देना, तथा महिलाओं को पंचायती राज संस्थाओं में भागीदार बनाना। इसने त्रि–स्तरीय पंचायती राज प्रणाली के स्थान पर द्वि–स्तरीय प्रणाली की भी सिफारिश की। जिला स्तर पर जिला परिषद तथा ग्राम स्तर पर मंडल, पंचायत जिसमें गांवों का एक ग्रुप शामिल होगा जिसकी

जनसंख्या 15000 से 20000 के बीच हो। लेकिन अशोक मेहता समिति की रिपोर्ट राज्यों मे लागू नहीं हो सकी क्योंकि जनता पार्टी की सरकार गिर गयी तथा उसके स्थान पर 1980 में कॉंग्रेस की सरकार बनी। कुछ राज्य जिनमें गैर–कांग्रेसी सरकार थी, जैसे कि कर्नाटका, पश्चिम बंगाल और आंध्र प्रदेश ने पंचायती राज संस्थाओं को पुनः क्रियाशील करने की प्रक्रिया की शुरूआत की। आखिरकार 1990 में कांग्रेस सरकार ने अशोक मेहता समिति की सिफारिशों को मान लिया। उसकी सिफारिशें 73वें एवं 74वें संविधान संशोधन में शामिल कर ली गयी लेकिन कुछ बदलाव के साथ।

24 अप्रैल 1993, भारत में पंचायती राज संस्थाओं का एक ऐतिहासिक दिन था क्योंकि इसी दिन संविधान का 73वाँ संशोधन, 1992 लागू हुआ जिसने पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता प्रदान की। 74वाँ संविधान संशोधन भी शहरी निकायों को अधिक शक्ति प्रदान करता है। 74वाँ संविधान संशोधन, 1992, एक जून 1993 को लागू हुआ। अगले अंक में आप 73वाँ तथा 74वाँ संविधान संशोधन अधिनियम की प्रमुख विशेषताओं के बारे में जानकारी हासिल करेंगे।

## 13.4 73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 1992

73वाँ संशोधन देश में पंचायतों की कार्यप्रणाली को ठीक प्रकार से चलाने की बात करता है। यह अधिक लोकतांत्रिक एवं कमजोर वर्गों के सशक्तिकरण का प्रयास करता है। इसी प्रकार 74वाँ संशोधन भी शहरी क्षेत्रों में नगर पालिकाओं अथवा नगर परिषदों के संबंध में समान दिशा–निर्देश प्रदान करता है। ये संशोधन अधिनियम सभी राज्यों को अपनी नीति बनाने के लिये दिशा–निर्देश तय करते हैं ताकि समुचित रूप से पंचायत एवं शहरी निकायों को भी इसमें शामिल किया जा सके। सभी राज्यों को पंचायतों से संबंधित बदलाव लाने के प्रावधान बनाने को कहा गया।

वें संविधान संशोधन अधिनियम की मुख्य विशेषताऐं इस प्रकार है।

क) सभी राज्य जिनकी जनसंख्या 20 लाख से ऊपर है वहां पर त्री–स्तरीय पंचायती राज व्यवस्था का प्रावधान किया गया। इसमें ग्राम पंचायत, पंचायत समिती एवं जिला परिषद का गठन किया गया। ग्राम पंचायत ग्राम स्तर पर, पंचायत समिती खंड या मध्य स्पर पर तथा जिला परिषद जिला स्तर पर।

ख) प्रत्येक पाँच वर्ष में पंचायतों का चुनाव करवाना तथा पंचायत के विघटन के बाद 6 महीने के अंदर चुनाव करवाना आवश्यक माना गया।

ग) सभी स्तर पर पंचायतों में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जन जाति के वर्गों अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गयी एवं महिलाओं के लिए अलग से 33 प्रतिशत सीटें आरक्षित की गयी।

घ) पंचायतों के विभिन्न अधिकारों के लिए राज्य वित्त आयोग की नियुक्ति की सिफारिश की।

ङ) एक जिला योजना समिति का गठन करना ताकि वह एक ड्राफ्ट तैयार कर सके जिले के संपूर्ण विकास के लिये।

73वाँ संविधान संशोधन अधिनियम का प्रमुख लक्ष्य था ग्राम पंचायतों को अधिक से अधिक शक्तियां प्रदान करना ताकि ये संस्थाऐं स्थानीय स्व–शासन, आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय की संस्था के रूप में विकसित हो सके। इस उद्देश्य के लिए इन्हें 29

विषयों पर योजनाऐं लागू करने का अधिकार दिया गया। ग्यारहवीं अनुसूची में इन 29 विषयों को शामिल किया गया है जिसमें मुख्य रूप से ये विषय है :– कृषि से संबंधित, भूमि सुधार, लघु सिंचाई, ग्रामीण आधारभूत ढ़ाँचा, गरीबी उन्मूलन, महिला एवं बाल विकास, कमजोर वर्गो का कल्याण तथा प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा इत्यादि। इन विषयों को संविधान की ग्यारहवीं अनुसूची में रखा गया है। इस अधिनियम के अनुसार, पंचायतों को राज्य द्वारा यह भी अधिकार दिया गया है कि इन पर कानून बना सकेः– राज्य द्वारा निर्धारित कर, यातायात कर एवं अन्य करों का संग्रहण करना, राज्य द्वारा संग्रहित करों में अपना हिस्सा माँगना तथा राज्य की निधि से अनुदान प्राप्त करना।

### 13.4.1 पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों के विस्तार) अधिनियम, 1996

यह अधिनियम 24 दिसंबर 1996 को लागू किया गया। यह अधिनियम पंचायतों को भारत के आठ आदिवासी क्षेत्रों तक विस्तृत किया गया। इनमें आंध्र प्रदेश, बिहार, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उड़ीसा एवं राजस्थान जैसे राज्य शामिल है। इस अधिनियम का इरादा आदिवासी लोगों को अपने कार्य स्वयं करने तथा प्राकृतिक संसाधनों पर अपना परंपरागत अधिकार रखने को अधिकृत करता हैं। राज्य सरकारों को इस अधिनियम के समाप्त होने के पहले कानून बनाने को कहा गया। यह अधिनियम एक साल बाद यानि 23 दिसंबर 1997 को समाप्त हो गया था।

**अभ्यास प्रश्न 1**

**नोटः** i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) ब्रिटिश शासन के पूर्व एवं ब्रिटिश शासन काल में पंचायती राज की प्रकृति में क्या अंतर था? व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) बलवंत राय मेहता समिति क्यों गठित की? इसकी सिफारिशें क्या थीं?

.....

.....

.....

.....

3) 73वें संशोधन अधिनियम की मुख्य विशेषताओं को पहचानिये जिसका संबंध पिछड़े वर्गो से था?

.....

.....

.....

## 13.5 73वें संशोधन अधिनियम के पश्चात् पंचायती राज संस्थाएंः उत्तर प्रदेश के संदर्भ में

ज्यादातर राज्यों में 73वें संशोधन के आधार पर कानून पारित किया गया तथा इस अधिनियम के प्रावधानों के अनुरूप पंचायती राज संस्थाऐं स्थापित की। निर्मल मुखर्जी और बलवीर अरोड़ा ने पंचायती राज संस्थाओं को संघवाद की तीसरी परत के रूप में माना। यह केन्द्र और राज्यों के दो परत संघवाद का विस्तार है। इस अधिनियम के लागू होने के पूर्व ही पांच राज्यों की पंचायती राज संस्थाओं को अपना लिया था। ये राज्य है, महाराष्ट्र, गुजरात, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश और कर्नाटक। हालांकि इन राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं के नाम और ढ़ाँचे में सभी स्तर का थोड़ा बहुत फर्क है। लेकिन 73वें संशोधन ने समान रूपरेखा प्रदान की। इस खण्ड में उत्तर–प्रदेश में पंचायती राज के ढ़ाँचे के बारे में चर्चा करेंगे। उत्तर प्रदेश में पंचायती राज संस्थाओं का ढ़ाँचा इस प्रकार है :–

### 13.5.1 ग्राम पंचायत

ग्राम सभा और इसके अंदर चुनकर आने वाले सदस्य ही ग्राम पंचायत का गठन करते हैं। ग्राम पंचायत का मुखिया प्रधान होता है। ग्राम पंचायतों का चुनाव ग्राम पंचायत के सदस्यों के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। यह ग्राम सभा के नाम से जानी जाती है जिसमें गांव के सभी वयस्क व्यक्ति होते हैं। ग्राम सभा वर्ष में एक बार अपनी आम सभा की बैठक बुलाती है। ग्राम सभा ग्राम पंचायत को विभिन्न मुद्दों पर अपना सुझाव एवं सिफारिशें दे सकती है। यह पंचायत की कार्यप्रणाली पर भी वक्तव्य दे सकती है। ग्राम पंचायत के दायरे में सभी 29 विषय आते है जो कि ग्यारहवीं अनुसूची में दिये गये है। पंचायतों को विभिन्न समितियों के गठन करने की जरूरत है ताकि वे विभिन्न जिम्मेदारियों को पूरा करने में मदद कर सके। इस प्रकार, ग्राम पंचायत के पास चाहे शक्तियाँ न हो लेकिन बहुत अधिक कार्य है करने के लिये। सभी ग्राम पंचायतों को चार समितियों के माध्यम से कार्य करने की जरूरत है : (1) समता समिति (महिला और बाल–विकास, पिछड़े और अनुसूचित जाति और जनजातियों के कल्याण), (2) विकास समिति (ग्रामीण कृषि उद्योग और विकास योजना, (3) शिक्षा समिति और (4) लोकहित समिति (जन स्वास्थ्य, जन कल्याण कार्य इत्यादि)।

### 13.5.2 क्षेत्र पंचायत

क्षेत्र पंचायत एक माध्यमिक स्तर पर होती है जिसमें सभी प्रधान इसके सदस्य होते है। इसमें सभी सदस्यों का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से क्षेत्रीय स्तर पर होता है, इसमें विधान सभा सदस्य, विधान परिषद सदस्य तथा जिला परिषद के प्रतिनिधि भी शामिल होते हैं।

### 13.5.3 जिला पंचायत (जिला परिषद)

क्षेत्र पंचायत की तरह ही जिला परिषद में चुने हुए सदस्य होते है जो सीधे चुनकर आते हैं। इसके अलावा विधान सभा सदस्य विधान परिषद सदस्य तथा जिले की सभी क्षेत्र पंचायतों के प्रमुख इसके सदस्य होते हैं। जिला पंचायत का प्रमुख कार्य ग्राम पंचायत और क्षेत्र पंचायत के कार्यों का निरीक्षण करना है। इसके अलावा त्यौहार एवं मेलों का वर्गीकरण करना, ग्रामीण और जिला सड़कों के रखरखाव के लिए वर्गीकरण करना, इत्यादि कार्य है। जिला परिषदों को वार्षिक जिला योजना भी तैयार करने की जिम्मेदारी है जिसमें क्षेत्र पंचायत और ग्राम पंचायत द्वारा किये कार्य भी शामिल है। ज्यादातर राज्यों में ग्राम पंचायतों

के पदाधिकारी का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से होता है जबकि जिला पंचायत और माध्यमिक स्तर पर अप्रत्यक्ष तरीके से चुनाव होता है। हालांकि कुछ ऐसे भी उदाहरण है जहां पर सभी स्तरों पर प्रत्यक्ष चुनाव होता है। गोवा उसमें एक प्रमुख राज्य है।

### 13.5.4 पंचायती राज संस्थाओं और जिला ग्रामीण विकास प्राधिकरणों के बीच संबंध

पंचायतों एवं प्रशासनिक तंत्र के बीच संबंध की प्रकृति पंचायती राज संस्थाओं का महत्वपूर्ण पहलू है। उदाहरण के लिये, उत्तर प्रदेश सरकार ने 1995 में बजाज समिति का गठन किया ताकि यह समिति पंचायत एवं जिला विकास प्राधिकरण के बीच संबंधों को मजबूत बनाने के कुछ सुझाव दे सके। इस समिति ने इन दोनों के कार्य का एकीकरण का सुझाव दिया क्योंकि इनका विलय संभव नहीं था। एक महत्वपूर्ण कदम उठाते हुए जिला परिषद के अध्यक्ष को जिला ग्रामीण विकास प्राधिकरण (डी.आर.डी.ए) का अध्यक्ष बनाया गया तथा जिला मजिस्ट्रेट को इसका उपाध्यक्ष। ताकि इसे समुचित शक्तियां मिल सके। जिला मजिस्ट्रेट को पंचायत के ढ़ाँचे से अलग रखा गया, और मुख्य विकास अधिकारी को पंचायत का मुख्य कार्यकारी अधिकारी बनाया गया। बजाज समिति ने ग्राम स्तर पर भी कुछ सिफारिशें की ताकि यहां भी कार्य का एकीकरण हो सके इसके लिए ग्राम पंचायत अधिकारी और ग्राम विकास अधिकारी के बीच कार्यों के एकीकरण का सुझाव दिया। तथा इसके खंड प्रमुख के प्रतिनिधित्व की भी बात कही। लेकिन ये सिफारिशें अभी तक प्रभावी नहीं हो पायी है।

### 13.5.5 पंचायती राज संस्थाओं का आकलनः (मूल्यांकन)

पंचायती राज संस्थाओं का आकलन गांवों में सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति के संदर्भ में करने की जरूरत है। पंचायती राज संस्थाओं ने गांवों के विकास में काफी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। लेकिन इनका प्रदर्शन परिस्थितियों के अनुसार बदलता रहता है। फिर भी इनका सबसे बड़ा योगदान है लोगों की राजनीतिक चेतना के स्तर में वृद्धि करना।

73वें संविधान संशोधन के पश्चात्, 1990 में ज्यादातर राज्यों ने स्थानीय निकायों को सत्ता देने का प्रयास किया। कुछ राज्यों जैसे राजस्थान, मध्यप्रदेश, आंध्रप्रदेश और केरल ने राज्य की नीतियों के निर्माण एवं क्रियांन्वयन में, योजना एवं निर्णय प्रक्रिया में लोगों को शामिल करने का विशेष प्रयास किया। भूमंडलीकरण के युग में पंचायतों, एन.जी.ओ एवं डी. आर.डी.ए. के बीच सहयोग ने भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इन राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं ने ग्रामीण विकास, स्वास्थ्य एवं शिक्षा में काफी योगदान दिया है। इंटरनेट के प्रयोग ने राजस्थान, आंध्र–प्रदेश और मध्यप्रदेश में ग्राम पंचायतों के कार्यों को काफी आसान कर दिया है। 73वें संविधान संशोधन ने सभी राज्यों को पंचायती राज संस्थाओं में अनु. जाति, जनजाति एवं महिलाओं को आरक्षण का प्रावधान आवश्यक कर दिया गया है। पंचायती राज संस्थाऐं काफी गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है जैसे गुटबाजी, जातिवाद, भ्रष्टाचार, जिससे इसकी जनतांत्रिक प्रक्रिया को नुकसान पहुँच रहा है।

73वें संविधान संशोधन से पूर्व प्रबल समुदायों ने पंचायती राज संस्थाओं को अपने कब्जे में कर रखा था लेकिन उसके बाद स्थिति बदली और अब महिलाऐं भी पंचायतों में पुरूषों के बराबर भागीदार है। इससे महिलाओं में काफी आत्मविश्वास बढ़ा है तथा कुछ स्थानों पर तो महिलाऐं पंचायती राज संस्थाओं में अपना प्रभावशाली नेतृत्व प्रदान कर रही है।

उन्होंन सहसाब्दी विकास लक्ष्य को हासिल करने में बड़ा योगदान दिया है, विशेषकर लोगों को इसमें भागीदार बनाकर जिसमें विकास के कार्यक्रमों में कमजोर वर्गों के लोगों की भागीदारी भी शामिल है। 73वें संशोधन ने विभिन्न कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में पारदर्शिता और सामाजिक हिसाब या ऑडिट का विशेष ध्यान रखा है।

## 13.6 शहरी स्थानीय स्व-शासन (सरकार)

74वाँ संशोधन पारित होने तक पांच प्रकार की शहरी शासन प्रणाली अस्तित्व में थी। (1) नगर निगम (2) नगर परिषद (3) कस्बा क्षेत्र समितियाँ (4) चिन्हित क्षेत्रीय समितियाँ तथा (5) छावनी परिषद। सबसे पहले 1687 में मद्रास के अंदर नगर निगम था, इसके बाद 1762 में बंबई एवं कलकता में नगर निगमों की स्थापना हुई। 1870 में लॉर्ड मेयो के प्रस्ताव के बाद नगरपालिकाओं में चुने हुए अध्यक्ष की शुरूआत की गयी। वर्तमान में जो स्थानीय शासन का ढ़ाँचा है वह लॉर्ड रिपन के प्रस्ताव के बाद स्थानीय स्व–शासन में 18 मई, 1882 को लागू किया गया। 1870 तक ब्रिटिश भारत में करीब 200 नगरपालिकाऐं मौजूद थीं।

### 13.6.1 74वां संविधान संशोधन अधिनियम (1992) : शहरी स्थानीय स्व-शासन निकाय

भारत सरकार ने 74वाँ संविधान संशोधन अधिनियम 1992 में पारित किया, इसने शहरी निकायों को और अधिक जवाबदेह, प्रतिनिधित्व, कुशल एवं पारदर्शी बनाया। 74वें संविधान संशोधन अधिनियम को ग्रामीण–शहरी संबंध समिति की सिफारिशों के आधार पर लागू किया गया। 74वाँ संविधान संशोधन अधिनियम पारित होने से पूर्व शहरी प्रशासन की पाँच प्रकार की इकाइयाँ थी। [इस अधिनियम ने इन पाँच समितियों को बदलकर तीन नगर पंचायतों को स्थापित किया]। इन नगर पंचायतों में सर्वप्रथम ग्रामीण से शहरी क्षेत्रों में किस प्रकार की शहरी निकाय को शुरू किया जाये इसका निर्णय राज्य सरकार के द्वारा लिया गया। जिन निगम क्षेत्रों की जनसंख्या तीन लाख से ज्यादा हो वहां पर एक वार्ड समिति भी थी नगर पालिकाओं के अलावा। इस प्रकार से शहरी निकाय द्वि–स्तरी व्यवस्था थी।

नगर निगम निकायों में पूरे क्षेत्र से सदस्य आते थे। चाहे वे चुने हुए प्रतिनिधि हो, या फिर लोक सभा एवं विधान सभा के सदस्य हो। इसमें अन्य संस्थाओं के सदस्य भी शामिल होते है जिनमें विभिन्न समितियों के अध्यक्ष होते है। वह व्यक्ति होते है जिसे निगम प्रशासन का अनुभव हो या विशेष ज्ञान हो, उसे नगर परिषद में वोट देने का अधिकार होता है।

नगरपालिका निकायों में भी अनुसूचित जाति, जन जाति एवं महिलाओं के लिऐ सीटें आरक्षित की गयी है। महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत सीटें आरक्षित की गई है। नगर पालिका का कार्यकाल भी पांच वर्ष का होता है, लेकिन यह समय से पूर्व भी विघटित हो सकती है। यदि नगर पालिकाओं का विघटन होता है तो छः माह के अंदर चुनाव करवाना अनिवार्य है। संविधान की 12वीं अनुसूची जो कि 74वें संविधान के पश्चात् जोड़ी गयी है इसमें 18 विषय शामिल है। इनका विवरण इस प्रकार है :–

1) शहरी योजना, इसमें कस्बा योजना भी शामिल है।

2) भूमि-उपयोग पर कानून बनाना एवं भवन निर्माण करना

3) समाजिक और आर्थिक विकास के लिए योजना बनाना

4) सड़क एवं पुल निर्माण

5) व्यावसायिक, औद्योगिक एवं घरेलू जलापूर्ति

6) जन स्वास्थ्य, साफ–सफाई तथा ठोस कचरे का प्रबंधन करना

7) अग्निशमन सेवाऐं

8) शहरी वनारोपण, पर्यावरण की रक्षा, और परिवेशिक पहलुओं को आगे बढ़ाना

9) समाज के कमजोर वर्गों के हितों की रक्षा करना, जिसमें विकलांग एवं मानसिक तौर पर बीमार भी शामिल हैं।

10) गंदी–बस्तियों का सुधार करना तथा इन्हें पक्का बनाना

11) शहरी गरीबी उन्मूलन

12) शहरों में सुविधाऐं का प्रावधान जैसे, पार्क, गार्डन तथा खेल–कूद की व्यवस्था करना।

13) सांस्कृतिक, शैक्षिक एवं सौंदर्य पहलुओं को बढ़ावा देना।

14) शमशान घाट, विद्युत शव दाह ग्रह का निर्माण एवं कब्रिस्तान का निर्माण करना।

15) पशुओं के पानी पीने का पोखर बनाना तथा जानवरों पर अत्याचार की रोकथाम।

16) जन्म एवं मृत्यु पंजीकरण।

17) जन सुविधाओं का निर्माण, जिसमें सड़क लाइट, पार्किंग की व्यवस्था, बस–स्टाफ, एवं शौचलयों की व्यवस्था।

18) वद्यालयों या चर्म शोधनालयों का विनियम करना।

राज्य सरकारों को कर, ड्यूटी, यातायात कर एवं अन्य शुल्क लगाने का अधिकार है तथा सभी प्रकार की अनुदान राशि उन्हें दी जानी चाहिये। राज्य सरकार को प्रत्येक पांच वर्ष में एक वित्त आयोग की नियुक्ति करनी चाहिये। इस वित्त आयोग का यह कार्य है कि वह राज्य सरकार और नगर पालिकाओं को बीच करों, ड्यूटी, यातायात करों एवं अन्य शुल्कों का बंटवारा ठीक से कर सकें। राज्य वित्त आयोग यह भी सिफारिश कर सकता है कि नगरपालिकाओं को राज्य के कोष (निधी) से अनुदान दिया जाये।

74वें संविधान संशोधन ने मेयर का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से कराने का प्रावधान किया है। यह मेयर का कार्यकाल पांच वर्ष का होगा। मेयर के खिलाफ जब वह पद ग्रहण करता है उसके दो वर्षों के अंदर अविश्वास प्रस्ताव नहीं लाया जा सकता यदि निगम का कार्यकाल 6 माह से कम बचा हो तो उसे पद से नहीं हटाया जा सकता है। मेयर को हटाने के लिए चुने हुए पार्षदों का दो तिहाई बहुमत की आवश्यकता होती है।

नगर निगम सीधे राज्य सरकारों के साथ बात करती है जबकि नगरपालिकाऐं जिला कलेक्टर और विभागीय आयुक्त के प्रति उत्तरदायी है। नगर निगम की आम सभा में वे सभी पार्षद होते हैं जो तीन से पांच वर्ष तक चुनकर आते हैं। वे या तो चुने हुए पार्षद होते है या फिर निगम कार्यों के विशेषज्ञ होते हैं।

विभिन्न कार्यों को पूरा करने के लिये नगर निगम की दो समितियां होती है (1) वैद्यानिक समितियाँ (2) गैर–वैद्यानिक समितियाँ। पहली समिति में कार्यकारी समिति, स्थायी समिति, योजना समिति, स्वास्थ्य समिति और शिक्षा समिति शामिल है। जबकि दूसरी समिति में परिवहन समिति, महिला एवं बाल कल्याण समिति एवं अन्य समितियाँ शामिल है। स्थायी समिति का कार्य संचालन समिति की तरह होता है जिसमें कार्यपालिका के कार्य, निगरानी,

वित्तिय और व्यक्तिगत अधिकार शामिल है। स्थायी समिती इन सब में सबसे महत्वपूर्ण समिति है।

नगर परिषद पार्षदों के बीच में से ही अपना अध्यक्ष चुनती है। अध्यक्ष का कार्यकाल भी परिषद के कार्यकाल तक बना रहता है। नगर परिषद के साथ साथ इसका कार्यकाल भी समाप्त हो जाता है। कुछ राज्यों में नगर परिषद के अध्यक्ष का चुनाव भी प्रत्यक्ष रूप से नागरिकों द्वारा करवाया जाता है। नगरपालिका के अंदर अध्यक्ष के पास काफी सारी शक्तियाँ होती है। वह एक प्रकार से मुख्य कार्यकारी प्रमुख होता है। वह नगर परिषद की बैठकें बुलाता है तथा उनकी अध्यक्षता भी करता है। वह सभी विवादित मुद्दों पर अपना अंतिम फैसला लेता है तथा वह मुख्य कार्यकारी अफसर होने के नाते इसके कार्यो को लागू करता है। अध्यक्ष की शक्तियाँ बहुमत के समर्थन पर निर्भर है। नगर परिषद के द्वारा विभिन्न समितियाँ भी गठित की जाती है। नगर परिषद की समितियों के कार्य एवं शक्तियों नगर निगम की समितियों के समान होते है। छावनी बोर्ड मुख्य रूप से सैनिकों का क्षेत्र होता है जिसमें आम नागरिकों की भी संख्या होती है।

शहरी निकाय स्थानीय स्तर पर कार्यों को कुशलता पूर्वक करने तथा संसाधनों का उचित उपयोग करने और उपयोगी सेवाऐं प्रदान करने के प्रति उत्तरदायी है। नगर निगम सरकार के कार्य, कर्तव्य एवं जिम्मेदारी बाध्यकारी मानी जाती हैं। इसमें दो प्रमुख कार्य है (1) अनिवार्य कार्य तथा (2) विवेकाधीन कार्य। अनिवार्य कार्य इस प्रकार है :– पीने योग्य पानी की पूर्ति करना, सड़क निर्माण एवं रख रखाव, सड़कों की सफाई एवं प्रकाश की व्यवस्था, सीवर की सफाई, अस्पताल का प्रबंध करना, प्राथमिक विद्यालयों की स्थापना करना, जन्म प्रमाण पत्र बनाना, गलियों का नामांकरण तथा घरों की संख्या निर्धारित करना।

विवेकाधीन कार्य इस प्रकार है खतरनाक मकानों या भवनों को हटाना या सुरक्षित रखना, पार्कों का निर्माण और रख रखाव करना, इसके अलावा बाग–बगीचे, पुस्तकालय, संग्रहालय, धर्मशाला, कुष्ठ रोगियों के घर बनाना, अनाथालय बनाना, और महिलाओं के लिए बचाव घर बनाना, वृक्षारोपण और सड़क किनारे पौधों को लगाना। निम्न आय के लोगों के लिए घर बनाना, लोगों के लिए स्वागत समारोह करना, प्रदर्शनी लगाना, तथा मनोरंजन की व्यवस्था करना इत्यादि। ज्यादातर राज्यों में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा स्थानीय निकायों की जिम्मेदारी है।

## 13.7 नगर निगम वित्त

नगर निगम निकायों के कर की कोई अलग से सूची नहीं है। यह उस राज्य के अधिकार क्षेत्र में आता है। नगर निगमों के राजस्व मुख्य रूप से इस प्रकार के हैः–

### 13.7.1 कर राजस्व

शहरी स्थानीय निकायों द्वारा लगाये जाने वाले प्रमुख कर इस प्रकार हैः–

1) संपत्ति कर, जलापूर्ति पर लगाये जाने वाला सेवा अधिकार
2) संरक्षण, जल–निकास, प्रकाश (रोशनी) और मलबा हटाना
3) व्यवसाय पर लगाये जाने वाला कर
4) वाहनों पर लगाये जाने वाला कर (मोटर वाहनों के अलावा)

नगर निगमों के कर लगाने का दायरा (क्षेत्र) विस्तृत है। नगर निगम राज्य अधिनियम के अधीन रहकर कोई भी कर लगाने या बढ़ाने का अधिकार रखती है। संपत्ति कर उनमें से एक प्रमुख उदाहरण है। संपत्ति कर निगम निकायों का सबसे बड़ा राज्स्व प्राप्ति का स्रोत है जहां पर चुंगी कर का प्रावधान नहीं है। संपति कर मकान और भूमि पर लगाया जाता है जिसका प्रमुख आधार किराया मूल्य पर निर्धारित किया जाता है।

### 13.7.2 चुंगी कर

चुंगी कर वह कर है जो स्थानीय क्षेत्रों में सामान के (माल) लाने पर प्रवेश के दौरान लगया जाता है। चुंगी कर बहुत ही पुराना और परंपरागत कर है और स्थानीय राजस्व का बड़ा स्रोत भी है। यह कुल राजस्व का 60 से 80 प्रतिशत होता है जो शहरी निकायों द्वारा लगाया जाता है। वर्तमान में चुंगी कर के स्थान पर एक अकेला कर लागू किया गया है जिसे जी.एस.टी. या माल एवं सेवा कर के नाम से भी जानते है। जी.एस.टी. को भारत में एक जुलाई 2017 को लागू किया गया।

### 13.7.3 गैर कर राजस्व

निगम कानूनों के अंतर्गत लाइसेंस देने का प्रावधान किया गया है। सभी स्थानीय प्रावधिकरणों को सेवाऐं प्रदान करने के लिए शुल्क लगाने एवं एकत्र करने का अधिकार है। उपभोक्ता शुल्क इन सेवाओं पर लगाया जाता है। ये जन सुविधाओं पर शुल्क, पार्किंग शुल्क, खेल के मैदानों में प्रवेश शुल्क, तथा तरणताल (स्वीमिंग पूल) में प्रवेश शुल्क इत्यादि भी लगा सकते हैं।

### 13.7.4 सहायता अनुदान

नगर निगम वित्त का प्रमुख तत्व सहायता अनुदान है। दो प्रकार के अनुदान है (1) सामान्य उद्देश्य अनुदान (जी.पी.जी) तथा (2) विशेष उद्देश्य अनुदान (एस.पी.जी.) पहला अनुदान स्थानीय निकायों के राजस्व को बढ़ाता है ताकि इससे साधारण कार्यों को पूरा किया जा सके। जबकि दूसरे अनुदान को विशेष उद्देश्य में ही उपयोग में लाया जाता है। जैसे महंगाई के कारण मजदूरी दरों में वृद्धि करना, शिक्षा अनुदान, जन–स्वास्थ्य अनुदान, सड़क मरम्मत इत्यादि। ये अनुदान अस्थायी होती है तथा विवेकाधीन होती है।

### 13.7.5 उधार और ऋण

नगर निगम निकाय राज्य सरकार से स्थानीय ऋण कानून (1914) के अंतर्गत उधार ले सकती है। यह विकास कार्यों के लिए उधार ले सकती है और इसे कर्जे के रूप में वापस कर सकते है। ये उधार निम्न कार्यों के लिए ले सकती है :–

1) निर्माण कार्य
2) राहत कार्य के लिए विशेषकर अकाल या कमी के वक्त
3) किसी महामारी के फैलाने के दौरान
4) भूमि–अधिग्रहण
5) बकाया ऋण को चुकाने के लिए।

74वें संविधान संशोधन के पश्चात् 12वीं अनुसूची में 18 कार्यों को जोड़ने के बाद नगर निगमों की कार्य की जिम्मेदारी बढ़ गयी है। ये स्थानीय विकास की योजना में भागीदारी

निभाती है तथा विकास कार्यों का लागू करने में भी अपनी भूमिका निभाती है। जैसा कि इसके कार्य करने के क्षेत्र में लगातार बढ़ोतरी हो रही है इसलिए इसके अतिरिक्त वित्तिय आवंटन की आवश्यकता भी बढ़ रही है।

### 13.7.6 माल एवं सेवा कर (जी.एस.टी.)

जी.एस.टी. पूरे देश के लिए एक अप्रत्यक्ष कर है एवं बाजार के लिये भी। इसे काफी लंबे वर्षों की यात्रा के बाद (13 वर्षों के बाद) एक जुलाई 2007 को लागू किया गया। इसके ऊपर पहली बार 2003 में केलकर टास्क फोर्स की रिपोर्ट में चर्चा की गयी थी। यह एक अकेला कर है जो माल की आपूर्ति एवं सेवा पर लगाया जाता है। सीधे उत्पादक से उपभोक्ता तक। जी.एस.टी. से अब अप्रत्यक्ष करों की दर पूरे देश में एक समान है। यह अनुमान लगाया गया है कि व्यापार और उद्योग में इस कर के माध्यम से प्रतिस्पर्धी में सुधार होआ और अच्छा व्यवसाय होगा। लेकिन कुछ वस्तुओं पर इसका नकारात्मक प्रभाव पड़ा है क्योंकि करों की दरों में वृद्धि हुई है।

**अभ्यास प्रश्न 2**

**नोट:** i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों की जाँच इस इकाई के अन्त में दिए गए आदर्श उत्तरों से करें।

1) ग्राम पंचायत की संरचना क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) 74वें संविधान संशोधन अधिनियम के पूर्व एवं इसके बाद शहरी निकायों का परीक्षण कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) नगर निगम के राजस्व के प्रकार की पहचान कीजिए?

.....

.....

.....

.....

.....

## 13.8 सारांश

स्थानीय स्व–शासन निचले स्तर पर एक ऐसी संस्था है जिससे कानून एवं न्याय की उम्मीद की जाती है। यह ग्रामीण इलाकों एवं शहरों में कानून व्यवस्था बनाये रखती है। स्थानीय सरकारों में पंचायती राज संस्थाऐं एवं नगर निगम आते हैं। यह संस्था निम्न–स्तर पर लोकतंत्र का सुरक्षा कपाट है। 73वें एवं 74वें संशोधन के पश्चात् इसके कार्य एवं क्षेत्र में वृद्धि हुई है। इसकी भूमिका में भी विस्तार हुआ है। ग्रामीण स्तर पर सभी गाँववासी पंचायती राज संस्थाओं में भागीदारी करते हैं। इससे ग्राम स्तर पर लोकतत्रं मजबूत होता है। तथापि, पंचायती राज संस्थाऐं भी कई चुनौतियों का सामना कर रही है जैसे भ्रष्टाचार, एवं प्रभुत्व सामाजिक समूहों का इनमें दखल (हस्तक्षेप)।

## 13.9 उपयोगी संदर्भ

1) झा. एस. एन. और माथुर, पी. सी. (1999), विकेन्द्रिकरण एवं स्थानीय राजनीति सेवा प्रकाशन, नई दिल्ली।

2) लिटेन. जी. के. और श्रीवास्तव, रवि (1999), अनइक्वल पार्टनर्स : पावर रिलेशन्स, डिवोलूशन एन्ड डवलपमेंट दा उत्तर प्रदेश, नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

3) पिंटो, मरीना, (2000), मेट्रोपोलिटन सिटी गवर्नेंस इन इंडिया, नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

## 13.10 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर 1

1) तथापि पंचायती राज व्यवस्था ब्रिटिश काल के पूर्व भी अस्तित्व में थी लेकिन ब्रिटिश सरकार ने इन्हें अलग तरीके से बनाने की कोशिश की।

2) सामुदायिक विकास कार्यक्रमों और राष्ट्रीय सेवा कार्यक्रमों की समीक्षा के लिए इस समिति का गठन किया गया। इसने ग्राम पंचायतों के गठन की सिफारिश की ताकि इन्हें राजनीतिक और आर्थिक शक्तियाँ देकर सर्पूण विकास किया जा सके।

3) इसने महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत आरक्षण को लागू किया तथा अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़े, वर्गों के प्रतिनिधित्व की गारंटी प्रदान किया।

**अभ्यास प्रश्न 2**

1) ग्राम पंचायत में ग्राम सभा एवं ग्राम पंचायत के चुने हुए सदस्य होते हैं। इसका संचालन ग्राम प्रधान करता है। ग्राम पंचायत में अप्रत्यक्ष रूप से चुना हुआ उप प्रधान भी होता है।

2) पाँच प्रकार की निगम निकाय अस्तित्व में 74वें संशोधन से पूर्व (1) नगर निगम (2) नगर परिषद (3) कस्बा क्षेत्र समितियाँ, (4) चिन्हित क्षेत्र समितियाँ तथा (5) छावनी बोर्ड। 74वें संशोधन ने इन्हें कम करके तीन बना दिया– (1) नगर पंचायत, नगर निगम परिषद एवं नगर निगम।

3) कर राजस्व, चुंगी (अब जी.एस.टी.) कर, गैर कर राजस्व, सहायता अनुदान और उधार एवं ऋण।

# संदर्भ सूची

अब्दुल, रहीम पी (1998), राष्ट्र निर्माण के संघीय मापदंड, नई दिल्ली, फेडरल अध्ययन केन्द्र, मानक प्रकाशन।

अंबडेकर, डा. बाबासाहेब (1994), लेख और भाषण, खण्ड 13, शिक्षा विभाग, महाराष्ट्र, सरकार।

बक्षी, पी. एम. (1999), भारत का संविधान, नई दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कंपनी।

बक्षी, पी. एम. (2003), भारत का संविधान, नई दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कंपनी।

बक्षी, पी. एम. (2012), भारत का संविधान, नई दिल्ली, यूनिवर्सल लॉ पब्लिसिंग कंपनी।

बसु, डी. डी. (2011), भारत के संविधान का परिचय, नागपुर, लेक्सिस, नेक्सिस बटरपर्थ, वर्धा।

बसु, डी. डी. (1960), भारत के संविधान का परिचय, कलकत्ता, एस. सी. सरकार एण्ड संस प्राइवेट लिमिटेड।

बसु, डी. डी. (1983), भारत के संविधान पर टिप्पणी, नई दिल्ली प्रेन्टिस हॉल।

भगवान, विष्णु, विद्या भूषण, और वन्दना मोहला (1984), विश्व के संविधान : एक तुलनात्मक अध्ययन, नई दिल्ली, स्टर्लिंग पब्लिसर्स, प्रा. लि.।

चागला, एम. सी. पी. बी. मुखर्जी & अन्य (1977), संविधानिक संशोधन : एक अध्ययन, कलकत्ता रूपक प्रकाशन।

चक्रवर्ती, उमलेन्द्र किशोर (2004), पहचान की खोज : उत्तरी पूर्व भारत में आदिवासी आंदोलन, 1947–1969, कोलकता, द एशियाटिक सोसायटी।

चौबे, एस. के (1976), भारत की संविधान सभाः क्रांति की प्रेरणास्रोत, नई दिल्ली, मनोहर प्रकाशन।

चौबे, एस. के (1999), भारत के उत्तर–पूर्वी राज्यों की पहाड़ी राजनीति : नई दिल्ली, ओरियंट लोंगमेन।

चौबे, एस. के (2009), भारतीय संविधान का निर्माण एवं कार्यप्रणाली : नई दिल्ली, एन. बी. टी.।

दास, सी. बी. (1977), भारत का राष्ट्रपति, नई दिल्ली, आर आर प्रिन्टर्स।

ग्रेनविल ऑस्टिन (2012), भारतीय संविधान : राष्ट्र की आधारशिला, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

ग्रेनविल ऑस्टिन (2002), लोकतांत्रिक संविधान की कार्यप्रणाली, भारत का अनुभव, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली।

जोन्नेंग आइवर सर (1969), केबिनेट सरकार, कैम्ब्रिज, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस।

झा, एन.एस. & पी. सी. माथुर, (1999), विकेन्द्रिकरण और स्थानीय राजनीति : नई दिल्ली प्रेस प्रकाशन।

कश्यप, सुभाष, (2011), हमारा संविधान, नई दिल्ली, एन. बी. टी.।

कश्यप, सुभाष, (1995), भारत की संसद का इतिहास, खंड 2, नई दिल्ली, शिप्रा. प्रकाशन

कश्यप, सुभाष, (1997), नागरिक एवं संविधान, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली

खोसला, माधव (2012), ऑक्सफोर्ड भारत संक्षिप्त परिचयः भारतीय संविधान, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

लिटन, जी. के. रवि श्रीवास्तव (1999), असमान साथी : सत्ता संबंध, उत्तर प्रदेश के विकास एवं सत्ता का हस्तांतरण, नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

मिश्रा, सलील (2001), सांप्रदायिक राजनीति का वर्णन : उत्तर प्रदेश, 1937–39, नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

मुखर्जी, हिरेन (1978), संसद का चित्रण, पुर्नगठन एंव प्रतिविंब, नई दिल्ली, विकास प्रकाशन।

नारंग, एस. ए. (2000), भारतीय सरकार और राजनीति, नई दिल्ली, गीतांजली प्रकाशन

पटनायक, रघुनाथ (1996), भारत में राज्यपाल एवं राष्ट्रपति की शक्तियां, नई दिल्ली, दीप एण्ड दीप प्रकाशन।

पिन्टो, मरीना, (2000), भारत में मेटोपोलीटन सिटी शासन : नई दिल्ली, सेज प्रकाशन।

रमन, सुन्दर (1977), मूल अधिकार एवं 42वां संविधान संशोधन, कलकत्ता, मिनर्वा प्रकाशन, प्रा. लि.।

राव, गोविन्द, एम. निर्विकार सिंह (2005), भारत में संघवाद की राजनीतिक अर्थनीति : नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

सरकार, सुमित (1983), आधुनिक भारत,1885–1947, नई दिल्ली, मैक्मिलन।

शंकर, बी. एल. वेलटिन रोड्रिग्स (2011), भारतीय संसद : लोकतंत्र की कार्यप्रणाली, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।